देसहरियाणा

साहित्यिक-सांस्कृतिक अभिव्यक्ति का मंच

वर्ष - 6, अंक-31-32, नवंबर 2020-फरवरी 2021

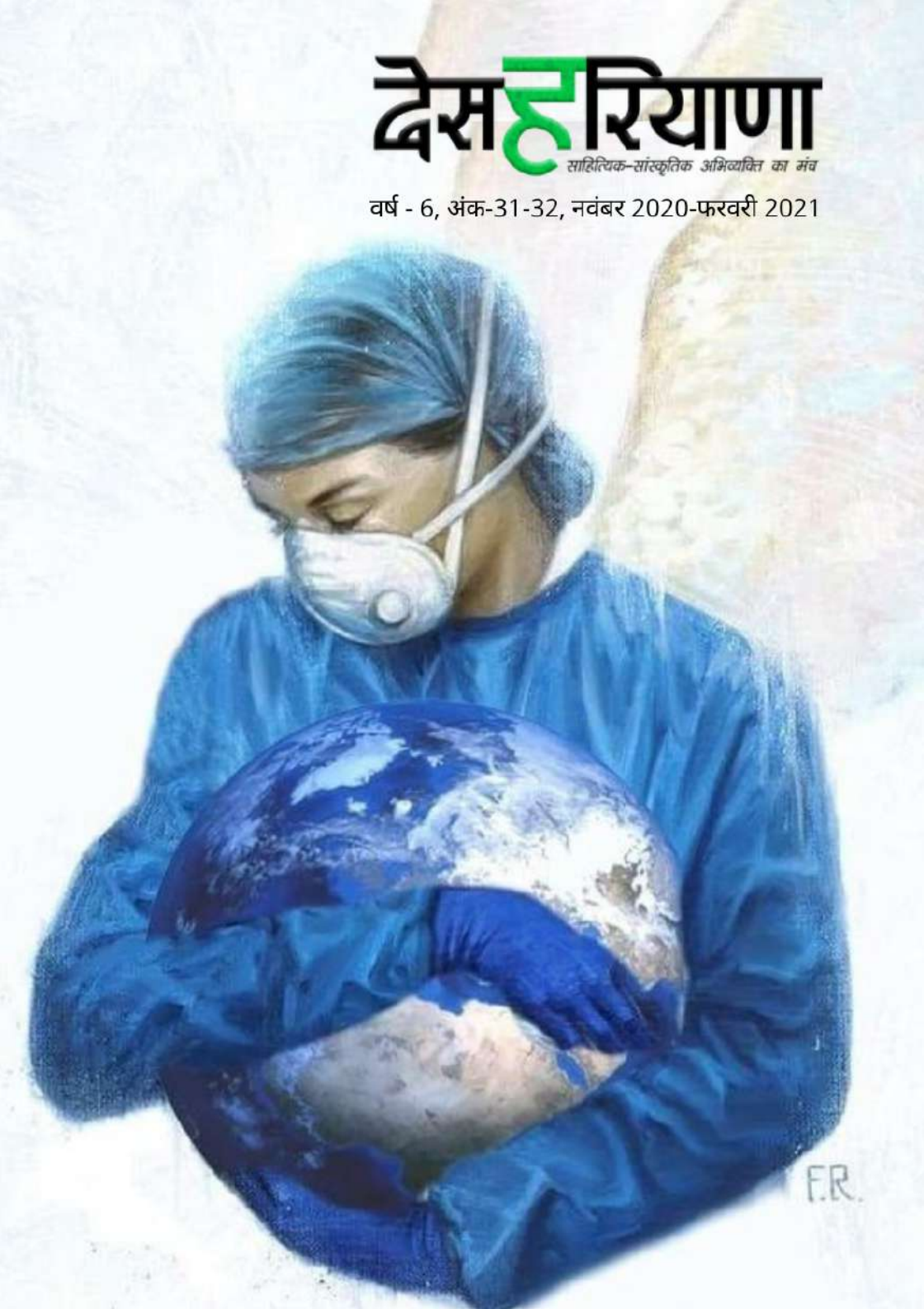

देसहरियाणा
साहित्यिक-सांस्कृतिक अभिव्यक्ति का मंच
ISSN 2454 -6878

वर्ष -6, अंक-31-32 नवम्बर 2020- फरवरी 2021

सम्पादक

सुभाष चंद्र

यह अंक हमारी वेबसाइट

www.desharyana.in

पर उपलब्ध है।

सम्पादन सहयोगः अरुण कैहरबा, जयपाल, कृष्ण कुमार, राजकुमार जांगड़ा

सलाहकारः प्रो. टी.आर.कुंडू, सुरेन्द्रपाल सिंह, परमानंद शास्त्री, अशोक भाटिया, सत्यवीर नाहड़िया, जगदीश आर्य

प्रबंधनः कीर्ति सैनी, विकास साल्याण, योगेश शर्मा

प्रकाशक: सत्यशोधक फाउंडेशन, 912, सैक्टर-13, कुरुक्षेत्र -136118

संपर्क : सुभाष चंद्र - 94164-82156,
विकास साल्याण - 90501-82156

ई-मेल : haryanades@gmai ।.com

वेबसाइट: www.desharyana.in

सहयोग राशि
(पंजीकृत डाक खर्च समेत)

आजीवन: पांच हजार रुपए;
वार्षिकः पांच सौ रुपए (संस्था)
तीन सौ (व्यक्तिगत)
एक प्रति: पचास रुपए

आनलाइन भुगतान के लिए
Satya Shodhak Foundation
Indian bank, Sector-13,
Kurukshetra,
A/C No. -50490177180
IFSC - IDIB000K849

प्रकाशित रचनाओं में प्रस्तुत विचार एवं दृष्टिकोण से सम्पादक का सहमत होनाआवश्यक नहीं।

सम्पादन एवं संचालन अव्यवसायिक एवं अवैतनिक। समस्त कानूनी विवादों का न्याय-क्षेत्र कुरुक्षेत्र न्यायालय।

अनुक्रम

संपादकीय 6

कहानी

राजेंद्र सिंह बेदी -क्वारंटीन 8

विरासत

सावित्रीबाई फुले के भाषण 21

कानून

राजविन्द्र सिंह चंदी - सूचना कानून का इतिहास 24

कविता

सुमित्रानंदन पंत -60, पूनम तुषामड-34, एस.एस. पवार 39

साक्षात्कार

नामवर सिंह से लंबी बातचीत 41

स्वास्थय

डॉ. नवनीत नव - वैक्सीन कैसे काम करती है 58

गजल

कर्मचंद केसर 61

रागनी

राजकुमार जांगड़ा 'राज' 62

लोक विनोद

जुत्ती हाथां म्हें ठार्या सूं - 56, मेज तलै है जी 64

ऊकडूं बैठणा अर फूंक मारणा ए घरेलू सै -70, 71

बख्त की इसी-तिसी होर्यी सै 79

पुस्तक समीक्षा

भागीराव यादवराव वाकले -माटी के दर्द का बयां करती पानीदार ग़ज़लें 65

गतिविधियां

पूनम तुषामड़ - ओमप्रकाश वाल्मीकि जी के महापरिनिर्वाण दिवस पर 72

स्मृति-शेष

गुरबख्श सिंह मोंगा - निजाम को आईना दिखाते चले गये राहत इंदौरी 75

देस हरियाणा का अगला अंक

किसान आंदोलन

पर केंद्रित होगा। रचनाकार समीक्षात्मक आलेख, कविताएं, कहानियां या किसी भी विधा में रचनाएं आमंत्रित हैं। रचनाएं देस हरियाणा के पते पर अथवा ईमेल से भेज सकते हैं।

सुभाष चंद्र, संपादक देस हरियाणा
haryanades@gmail.com

संपादकीय

अब तो दरख़्तो के साये में धूप लगती है
चलों चले यहां से उम्र भर के लिए

कोरोना महामारी ने मानव समाज को तबाही का मंजर दिखाया है और हमारी चाक-चौबंद व पुख्ता कही जाने वाली व्यवस्था के खोखलेपन और वर्गीय भेदभाव भी स्पष्ट तौर पर उजागर कर दिया है। सम्पन्न वर्ग अपने घरों में थाली बजाते हुए, दीये जलाते हुए तरह-तरह के व्यंजन बनाने की विधि, इम्युनिटी बढ़ाने के फॉर्मुले सोशल मीडिया पर साझा करता दिखाई दिया। वहीं मजदूर वर्ग रोजी रोटी और काम के लोप में विस्थापन के त्रासदपूर्ण दौर से गुजर रहा था। लाखों मजदूरों ने भूखे पेट हजारों कि.मी. की पैदल यात्रा की। आम लोगों ने लंगर-सेवा और चंदा इक्कठा करके जरुरतमंदों के लिए राशन व जरुरी सामान पहुंचाने का कार्य किया जिससे मानवता में विश्वास बढ़ता है, वहीं शासन-प्रशासन द्वारा भोजन व परिवहन की व्यवस्था तो छोड़ो मजदूरों का स्वागत लाठियों से करने के चित्र दिखाई दिये।आपदा को अवसर में बदलने का आह्वान भी मूलभूत संसाधनों की कमी व कमजोर ढांचे के कारण एक जुमला बनकर ही रह गया।

मीडिया का काफी बड़ा हिस्सा कोरोना के प्रसार के लिए एक समुदाय विशेष को जिम्मवार ठहराकर नफरतें फैलाने में व्यस्त रहा। दवाइयों व अन्य आवश्यक वस्तुओं की काला बाजारी से आम-आदमी को जमकर लूटा गया।

कोरोना ने समाज के हर पक्ष को कई तरह से प्रभावित किया है। साहित्य के क्षेत्र में देखने में आया कि जिन साहित्यकारों को लोग सिर्फ

नाम से ही जानते थे वे विभिन्न सोशल मीडिया के विभिन्न माध्यमों पर अपने पाठकों से सीधा संवाद करते रहे। कोरोना से पहले और कोरोना के बाद की दुनिया एक जैसी नहीं रहेगी। कुछ क्षेत्रों में मूलभूत परिवर्तन दिखाई देंगे, विशेषतौर पर शिक्षा के क्षेत्र में कोरोना के दूरगामी प्रभाव पड़ेंगे।

इस अंक में हिन्दी व उर्दू के मशहूर लेखक राजिन्द्र सिंह बेदी की कहानी "क्वरांटीन" को शामिल किया गया है। जो कोरोना काल की परिस्थितियों को प्रकट करती है। सावित्री बाई फुले के भाषण विद्या दान को शामिल किया गया है जिसमें सावित्रीबाई फुले ने जीवन शिक्षा के महत्व के विभिन्न दृष्टिकोणों पर प्रकाश डाला है। सूचना कानून के इतिहास और उसमें बदलाव को लेकर राजविन्द्र चंदी जी का लेख महत्वपूर्ण है।

सुमित्रानन्दन पंत, डॉ पुनम तुषामड़, एस.एस. पंवार की कविताएं और लोकधारा के अन्तर्गत कर्मचंद केसर की ग़ज़लें और राजकुमार जांगडा राज की रागनियों को इस अंक में शामिल किया गया है। संजीव कुमार और ज्ञानेन्द्र कुमार संतोष जी द्वारा हिन्दी के प्रसिद्ध आलोचक डॉ. नामवर सिंह जी का साक्षात्कार है। डॉ. नवमीत नव का लेख वैक्सीन कैसे काम करती है। वर्तमान कोरोना की परिस्थितियों में हमें नई समझ देता है।

अंक जैसा भी है आपके सामने है। आपकी प्रतिक्रिया के इंतजार में ...

संपादक

क्वारंटीन

□ राजिंदर सिंह बेदी

हिन्दी और उर्दू के मशहूर लेखक कथाकार राजिंदर सिंह बेदी ने 1940 में प्लेग महामारी को लेकर कहानी लिखी थी "क्वारंटीन", जिसे आज कोरोना के संदर्भ में पढ़ा जाना चाहिए। पढ़ते हुए आप ख़ुद कहेंगे कि ये तो आज की ही कहानी है। उर्दू में छपी इस कहानी का हिन्दी में अनुवाद संजीव कुमार और डॉ. जिया उल हक़ ने मिलकर किया है।

हिमालय के पाँव में लेटे हुए मैदानों पर फैल कर हर एक चीज़ को धुंधला बना देने वाले कोहरे की तरह प्लेग के ख़ौफ़ ने चारों तरफ़ अपना क़ब्ज़ा जमा लिया था। शहर का बच्चा बच्चा उसका नाम सुन कर काँप जाता था।

प्लेग तो ख़ौफ़नाक था ही, मगर क्वारंटीन उससे भी ज़्यादा ख़ौफ़नाक था। लोग प्लेग से इतने हैरान-परेशान नहीं थे जितने क्वारंटीन से, और यही वजह थी कि स्वास्थ्य विभाग ने शहरियों को चूहों से बचने की सलाह देने के लिए जो आदमी के क़द के बराबर इश्तिहार छपवाकर दरवाज़ों, और सड़क-चौराहों पर लगाया था, उसपर "न चूहा न प्लेग" के नारे को और बढ़ाते हुए "न चूहा न प्लेग", के साथ "न क्वारंटीन" भी लिख दिया था।

क्वारंटीन के सम्बंध में लोगों का ख़ौफ़ वाजिब था। एक डॉक्टर होने के नाते इस विषय में मेरी राय पक्की है और मैं दावे से कहता हूँ कि

जितनी मौतें शहर में क्वारंटीन से हुईं, इतनी प्लेग से न हुईं, हालाँकि क्वारंटीन कोई बीमारी नहीं, बल्कि वो उस बड़ी इमारत का नाम है जिसमें महामारी के दिनों में बीमार लोगों को तंदुरुस्त इंसानों से कानूनन अलग करके रखा जाता हैं ताकि बीमारी बढ़ने न पाए।

हालाँकि क्वारंटीन में डाक्टरों और नर्सों का काफ़ी इंतिज़ाम था, फिर भी मरीज़ों की संख्या बढ़ जाने पर हर मरीज़ का अलग अलग ध्यान नहीं रखा जा सकता था। अपने रिश्तेदारों को अपने क़रीब न होने से मैंने बहुत से मरीज़ों को अपना हौसला खोते हुए देखा। कई मरीज़ तो अपने आसपास लोगों को एक के बाद एक मरते देख कर मरने से पहले ही मर गये। कभी कभी तो ऐसा हुआ कि कोई मामूली तौर पर बीमार आदमी वहाँ की महामारी वाले माहौल के कारण ही दम तोड़ दिया और ज़्यादा मौत होने की वजह से मृत शरीर का आख़िरी क्रिया-कर्म भी क्वारंटीन के नियम क़ानून के हिसाब से ही होता था, यानी सड़कों पर पड़ी लाशों को मुर्दा कुत्तों की लाशों की तरह घसीट कर एक बड़े ढेर की सूरत में जमा किया जाता और बग़ैर किसी के धार्मिक नियम और रस्म पूरा किए, पेट्रोल डाल कर सबको आग के हवाले कर दिया जाता और शाम के वक़्त जब डूबते हुए सूरज की लालिमा के साथ जलती लाशों की लाल लाल लपटें उठती तो दूसरे मरीज़ यही समझते कि तमाम दुनिया को आग लग रही है।

क्वारंटीन के कारण मौतें इसलिए भी ज़्यादा हुई क्यूँकि जब भी किसी के अंदर बीमारी के लक्षण दिखने शुरू होते तो मरीज़ के परिवार वाले मरीज़ को छुपाने लगते, ताकि कहीं मरीज़ को ज़बरदस्ती क्वारंटीन में न लेकर चले जाएँ। चूँकि हर एक डाक्टर को निर्देश दिया गया था कि मरीज़ की ख़बर मिले तो फ़ौरन ख़बर करे, इसलिए लोग डॉक्टरों से इलाज भी न कराते और किसी घर में महामारी होने का पता सिर्फ़ उसी वक़्त चलता, जब उस घर से रोने की आवाज़ और लाश निकलती थी।

उन दिनों मैं क्वारंटीन में बतौर एक डॉक्टर के काम कर रहा था। प्लेग का ख़ौफ़ मेरे दिल-ओ-दिमाग़ पर भी हावी था। शाम को घर आने पर मैं एक अरसे तक कार्बोलिक साबुन से हाथ धोता रहता और एक अन्य दवा से ग़रारे करता, या पेट को जला देने वाली गर्म काफ़ी या ब्रांडी पी लेता। हालाँकि उससे मुझे अनिद्रा और आँखों के चौंधेपन की शिकायत पैदा हो गई। कई दफ़ा बीमारी के ख़ौफ़ से मैंने उल्टी वाली दवाएं खा कर अपनी तबीअत को साफ़ किया। जब बहुत गर्म काफ़ी या ब्रांडी पीने से पेट में जलन होने लगती और बुख़ार उठ उठ कर दिमाग़ तक पहुँच जाता, तो मैं अक्सर एक होशमंद इंसान की तरह अलग अलग क़यास लगाने लगता। गले में ज़रा भी ख़राश महसूस होती तो मैं समझता कि प्लेग के लक्षण दिखने शुरू हो गए हैं,... उफ़! मैं भी इस जानलेवा बीमारी का शिकार हो जाऊँगा... प्लेग! और फिर... क्वारंटीन!

उन्हीं दिनों में विलियम भागू ख़वाकरूब, जो नया नया ईसाई बना था और मेरी गली में सफ़ाई का काम किया करता था, मेरे पास आया और बोला, "बाबूजी... ग़ज़ब हो गया। आज अम्बोलेंस मोहल्ले के क़रीब से बीस और एक बीमार ले गई है।"

"इक्कीस? एम्बूलेंस में...?" मैं ने ताज्जुब करते हुए ये अलफ़ाज़ कहे।

"जी हाँ... पूरे बीस और एक...उन्हें भी क्विंटन (क्वारंटीन) ले जाएँगे... आह! वो बे-चारे कभी वापस न आएँगे?"

थोड़ी छानबीन करने पर मुझे पता चला कि भागू रात के तीन बजे उठता है। आध पाव शराब चढ़ा लेता है और फिर निर्देश के अनुसार कमेटी की गलियों में और नालियों में चूना बिखेरना शुरू कर देता है, ताकि महामारी फैलने न पाएँ। भागू ने मुझे बताया कि उसके तीन बजे उठने का ये भी मतलब है कि बाज़ार में पड़ी हुई लाशों को इकट्ठा करे और उस मोहल्ले में जहाँ वो काम करता है, उन लोगों के छोटे मोटे काम काज करे जो बीमारी के ख़ौफ़ घर के से बाहर नहीं निकलते। भागू तो

बीमारी से ज़रा भी नहीं डरता था। उसका ख़याल था अगर मौत आई हो तो चाहे वो कहीं भी चला जाए, बच नहीं सकता।

उन दिनों जब कोई किसी के पास नहीं फटकता था, भागू सर और मुँह पर कपड़ा बाँधे बिना डरे लोगों की सेवा कर रहा था। हालाँकि वो पढ़ा लिखा नहीं था, लेकिन अपने तजुर्बों से वो एक जानकर की तरह लोगों को बीमारी से बचने की तरकीबें बताता फिरता था। आम सफ़ाई, चूना बिखेरने और घर से बाहर न निकलने की सलाह देता था। एक दिन मैंने उसे लोगों को ज़्यादा शराब पीने का सलाह देते हुए भी देखा। उस दिन जब वो मेरे पास आया तो मैं ने पूछा, “भागू तुम्हें प्लेग से डर भी नहीं लगता?”

“नहीं बाबूजी... मेरा बाल भी बाँका नहीं होगा। आप इत्ते बड़े हकीम ठहरे, हज़ारों मरीज़ आपके हाथ से सही होकर गए। मगर जब मेरी बारी आएगी तो आपका भी दवा-दारू कुछ असर नहीं करेगा... हाँ बाबूजी... आप बुरा न मानें। मैं ठीक और साफ़ साफ़ कह रहा हूँ।" और फिर गुफ़्तगु का रुख बदलते हुए बोला, "कुछ कोन्टीन की कहिए बाबूजी... कोन्टीन की।”

“वहाँ क्वारंटीन में हज़ारों मरीज़ आ गए हैं। हम जितना सम्भव हो सके उनका इलाज करते हैं। मगर कहाँ तक, मेरे साथ काम करने वाले लोग भी ज़्यादा देर मरीज़ों के पास रहने से घबराते हैं। ख़ौफ़ से उनके गले और लब सूखे रहते हैं। फिर तुम्हारी तरह कोई मरीज़ के मुँह के साथ मुंह नहीं जा लगाता। न कोई तुम्हारी तरह इतनी जान मारता है... भागू! ख़ुदा तुम्हारा भला करे। जो तुम इंसानों की इस क़दर ख़िदमत करते हो।”

भागू ने गर्दन झुका दी और गमछा के एक पल्लू को मुँह पर से हटा कर शराब के असर से लाल हो चुके चेहरे को दिखाते हुए बोला, "बाबूजी, मैं किस लायक़ हूँ। मुझसे किसी का भला हो जाए, मेरा ये निकम्मा तन किसी के काम आ जाए, इससे ज़्यादा ख़ुशक़िस्मती और क्या हो सकती है। बाबूजी बड़े पादरी लाबे (रेवरेंड मोनित लाम, आबे)

जो हमारे मुहल्लों में अक्सर परचार के लिए आया करते हैं, कहते हैं, परमेश्वर इशा मसीह यही सिखाता है कि बीमार की मदद में अपनी जान तक लड़ा दो... मैं समझता हूँ..."

मैंने भागू की हिम्मत को सराहना चाहा, मगर भावुकता से मैं रुक गया। उसके आत्मविश्वास और अमली ज़िंदगी को देख कर मेरे दिल में एक जज़्बा पैदा हुआ। मैंने दिल में फ़ैसला किया कि आज क्वारंटीन में पूरी लगन से काम कर के बहुत से मरीज़ों को ज़िंदा रखने की कोशिश करूँगा। उनको आराम पहुँचाने में अपनी जान तक लड़ा दूँगा। मगर कहने और करने में बहुत फ़र्क़ होता है। क्वारंटीन में पहुँच कर जब मैंने मरीज़ों की ख़ौफ़नाक हालत देखी और उनके मुँह से निकली छींक मेरे नथुनों तक पहुँची, तो मेरी रूह काँप गई और भागू की बराबरी करने की हिम्मत न पड़ी।

फिर भी उस दिन भागू को साथ ले कर मैंने क्वारंटीन में बहुत काम किया। जो काम मरीज़ के ज़्यादा क़रीब रह कर हो सकता था, वो मैंने भागू से कराया और उसने बेग़ैर हिचकिचाए हुए किया... ख़ुद मैं मरीज़ों से दूर दूर ही रहता, इसलिए कि मैं मौत से बहुत डरा हुआ था और इससे भी ज़्यादा क्वारंटीन से।

मगर क्या भागू मौत और क्वारंटीन, दोनों से परे था?

उस दिन क्वारंटीन में चार-सौ के क़रीब मरीज़ दाख़िल हुए और अढ़ाई सौ के लगभग मौत के मुहँ में चले गए!

ये भागू की जाँबाज़ी का ही नतीजा था कि मैंने बहुत से मरीज़ों को ठीक किया। वो नक़्शा जो मरीज़ों के स्वस्थ्य होने की रफ़्तार का औसत दिखाने के लिए चीफ़ मेडिकल ऑफीसर के कमरे में टंगा था, उसमें मेरे अंतर्गत में रखे हुए मरीज़ों की औसत सेहत की लकीर सबसे ऊँची चढ़ी हुई दिखाई देती थी। मैं हर-रोज़ किसी न किसी बहाने से उस कमरे में

चला जाता और उस लकीर को सौ फ़ीसदी की तरफ़ ऊपर ही ऊपर बढ़ते देख कर दिल में बहुत ख़ुश होता।

एक दिन मैंने ब्रांडी ज़रूरत से ज़्यादा पी ली। मेरा दिल धक धक करने लगा। नब्ज़ घोड़े की तरह दौड़ने लगी और मैं एक पागल की तरह इधर उधर भागने लगा। मुझे ख़ुद शक होने लगा कि प्लेग के कीड़े ने मुझ पर आख़िरकार अपना असर कर ही दिया है और बहुत जल्द ही गिलटियाँ मेरे गले या जाँघों पर दिखने लगेगी। मैं बहुत घबरा गया। उस दिन मैंने क्वारंटीन से भाग जाना चाहा। जितना देर भी मैं वहाँ ठहरा, ख़ौफ़ से काँपता रहा। उस दिन मैं भागू को सिर्फ़ दो मर्तबा ही देख पाया।

दोपहर के क़रीब मैंने उसे एक मरीज़ से लिपटे हुए देखा। वो बहुत ही प्यार से उसके हाथों को थपक रहा था। मरीज़ में जितनी भी ताक़त थी उससे पकड़ते हुए उसने कहा, “भई अल्लाह ही मालिक है। इस जगह तो ख़ुदा दुश्मन को भी न लाए। मेरी दो लड़कियाँ..."

भागू ने उसकी बात को काटते हुए कहा, “परमेश्वर इशा मसीह का शुक्र करो भाई... तुम तो अच्छे दिखाई देते हो।”

“हाँ भाई शुक्र है ख़ुदा का... पहले से कुछ अच्छा ही हूँ। अगर मैं क्वारंटीन...”

अभी ये शब्द उसके मुंह में ही थे कि उसकी नसें खिंच गईं। उसके मुँह से कफ़ आने लगा। आँखें पथरा गईं। कई झटके आए और वो मरीज़, जो एक लम्हे पहले सबको अच्छा दिखाई दे रहा था, हमेशा के लिए ख़ामोश हो गया। भागू उसकी मौत पर दिखाई न देने वाले ख़ून के आँसू बहाने लगा और कौन उसकी मौत पर आँसू बहाता। कोई उसका वहाँ अपना होता तो आँसू बहाता। एक भागू ही था जो सबका रिश्तेदार था। सब के लिए उसके दिल में दर्द था। वो सबकी ख़ातिर रोता और कुढ़ता था... एक दिन वह परमेश्वर ईसा मसीह के पास गया, उनके सामने

झुककर आग्रह किया कि सभी इंसानों के गुनाह के बदले वो उसे दुनिया से उठा ले पर इंसानों को बख़्श दे।

उसी दिन शाम के क़रीब भागू मेरे पास दौड़ा दौड़ा आया। साँस फूली हुई थी और वो एक दर्दनाक आवाज़ से कराह रहा था। बोला, "बाबूजी... ये कोन्टीन तो नरक है। नरक। पादरी लाबे इसी क़िस्म की नरक का नक़्शा खींचा करता था..."

मैंने कहा, "हाँ भाई, ये नरक से भी बढ़ कर है... मैं तो यहाँ से भाग निकलने की तरक़ीब सोच रहा हूँ... मेरी तबीअत आज बहुत ख़राब है।"

"बाबूजी इससे ज़्यादा और क्या बात हो सकती है... आज एक मरीज़ जो बीमारी के ख़ौफ़ से बेहोश हो गया था, उसे मुर्दा समझ कर किसी ने लाशों के ढेरों में जा डाला। जब पेट्रोल छिड़का गया और आग ने सबको अपनी लपेट में ले लिया, तो मैंने उसे आग शोलों में हाथ पाँव मारते देखा। मैंने कूद कर उसे उठा लिया। बाबूजी! वो बहुत बुरी तरह झुलसा गया था... उसे बचाते हुए मेरा दायाँ बाज़ू बिल्कुल जल गया है।"

मैंने भागू का बाज़ू देखा। उस पर पीली पीली चर्बी नज़र आ रही थी। मैं उसे देखते हुए बिफ़र पड़ा। मैंने पूछा, "क्या वो आदमी बच गया है। फिर...?"

"बाबूजी... वो कोई बहुत शरीफ़ आदमी था। जिसकी नेकी और शरीफ़ी (शराफ़त) से दुनिया कोई फ़ायदा न उठा सकी, इतने दर्द की हालत में उसने अपना झुलसा हुआ चेहरा ऊपर उठाया और अपनी मरियल सी निगाह मेरी निगाह में डालते हुए उसने मेरा शुक्रिया अदा किया।"

"और बाबूजी..." भागू ने अपनी बात को जारी रखते हुए कहा, "उसके कुछ अर्से बाद वो इतना तड़पा, इतना तड़पा कि आज तक मैंने किसी मरीज़ को इस तरह जान तोड़ते नहीं देखा होगा... उसके बाद वो मर गया। कितना अच्छा होता जो मैं उसे उसी वक़्त जल जाने देता। उसे

बचा कर मैंने उसे बहुत दुख सहने के लिए ज़िंदा रखा और फिर वो बचा भी नहीं। अब उन्हीं जले हुए बाजुओं से मैं फिर उसे उसी ढेर में फेंक आया हूँ...”

इसके बाद भागू कुछ बोल न सका। दर्द की टीसों के दर्मियान उसने रुकते रुकते कहा, “आप जानते हैं... वो किस बीमारी... से मरा? प्लेग से नहीं।... कोन्टीन से... कोन्टीन से!”

हालाँकि इस नरक जैसे माहौल में भी लोगों को जितना हो सके राहत का सामान पहुँचाया जा रहा था पर आधी रात के समय जब उल्लू भी बोलने से हिचकिचाते थे, माँओं, बीबीयों, बहनों और बच्चों की चीख़ों की आवाज़ शहर में एक अजीब सा दर्दनाक माहौल पैदा करती थी। जब मेरे जैसे सही-सलामत लोगों के सीनों पर मनों बोझ रहता था, तो उन लोगों की हालत क्या होगी जो घरों में बीमार पड़े थे और जिन्हें हर तरफ़ से मायूसी ही दिखाई देती थी। और उसके ऊपर वो क्वारंटीन के मरीज़, जिन्हें मायूसी की हद से गुज़र कर यमराज दिखाई दे रहा था, वो ज़िंदगी से यूँ लिपटे हुए थे, जैसे किसी तूफ़ान में कोई किसी पेड़ की चोटी से लिपटा हुआ हो, और पानी की तेज़ लहरें बढ़ कर उस चोटी को भी डुबो देने की ख़्वाहिश रख रखी हो।

मैं उस रोज़ वहम की वजह से क्वारंटीन भी न गया। किसी ज़रूरी काम का बहाना कर दिया। हालाँकि मेरा मन बहुत परेशान था, क्यूँकि ये बहुत मुम्किन था कि मेरी मदद से किसी मरीज़ को फ़ायदा पहुँच जाता। मगर इस ख़ौफ़ ने जो मेरे दिल-ओ-दिमाग़ पर दबदबा बनाया था, उसने मुझे ज़ंजीर में बांध रखा था। शाम को सोते वक़्त मुझे सूचना मिली कि आज शाम क्वारंटीन में क़रीब पाँच सौ से ज़्यादा मरीज़ पहुँचे हैं।

मैं अभी अभी पेट को जला देने वाली गर्म काफ़ी पी कर सोने ही वाला था कि दरवाज़े पर भागू की आवाज़ आई। नौकर ने दरवाज़ा खोला तो भागू हाँफ्ता हुआ अंदर आया। बोला, "बाबू जी... मेरी बीवी बीमार हो गई... उसके गले में गिलटियाँ निकल आई हैं... ख़ुदा के वास्ते उसे

बचाओ ...उसकी छाती पर डेढ़ साला बच्चा दूध पीता है, वो भी ख़त्म हो जाएगा।"

बिना किसी हमदर्दी का इज़हार करते हुए, मैंने उससे पूछा, "इससे पहले क्यूँ न आ सके...क्या बीमारी अभी अभी शुरू हुई है?"

"सुबह मामूली बुख़ार था... जब मैं कोन्टीन गया..."

"अच्छा... वो घर में बीमार थी। और फिर भी तुम क्वारंटीन गए?"

"जी बाबूजी..." भागू ने काँपते हुए कहा। "वो बिल्कुल मामूली तौर पर बीमार थी। मैंने समझा कि शायद दूध चढ़ गया है... इस के सिवा और कोई तक्लीफ़ नहीं... और फिर मेरे दोनों भाई घर पर ही थे... और सैकड़ों मरीज़ कोन्टीन में बेबस..."

"तो तुम मरीज़ों के प्रति अपनी हद से ज़्यादा मेहरबानी और क़ुर्बानी के कारण उनकी बीमारी को अपने घर ले ही आए न। मैं न तुमसे कहता था कि मरीज़ों के इतना क़रीब मत रहा करो... देखो मैं आज इसी वजह से वहाँ नहीं गया। इसमें सब तुम्हारा क़ुसूर है। अब मैं क्या कर सकता हूँ। तुम जैसे जाँबाज़ को अपनी जाँबाज़ी का मज़ा भुगतना ही चाहिए। जहाँ शहर में सैकड़ों मरीज़ पड़े हैं..."

भागू ने आग्रह पूर्वक कहा, "मगर परमेश्वर इसु मसीह..."

"चलो हटो... बड़े आए कहीं के... तुमने जान-बूझ कर आग में हाथ डाला। अब उसकी सज़ा मैं भुगतूँ? क़ुर्बानी ऐसे थोड़े ही होती है। मैं इतनी रात को तुम्हारी कुछ मदद नहीं कर सकता..."

"मगर पादरी लाबे..."

"चलो... जाओ... पादरी लाम, आबे के कुछ होते..."

भागू सर झुकाए वहाँ से चला गया। उसके आध घंटे बाद जब मेरा ग़ुस्सा कम हुआ तो मैं अपनी हरकत पर शर्मिंदा होने लगा। मैं अकलमंद कहाँ का था जो बाद में परेशान हो रहा था। मेरे लिए यही यक़ीनन सबसे

बड़ी सज़ा थी कि अपनी तमाम ख़ुद्दारी को ताक पर रखते हुए भागू के सामने अपने पिछले रवैए पर अफ़सोस जताते हुए उसकी पत्नी का इलाज पूरा जी जान से करूँ। मैंने जल्दी जल्दी कपड़े पहने और दौड़ा दौड़ा भागू के घर पहुँचा... वहाँ पहुँचने पर मैंने देखा कि भागू के दोनों छोटे भाई अपनी भाभी को चारपाई पर लिटाए हुए बाहर निकाल रहे थे... मैंने भागू से पूछा, "इसे कहाँ ले जा रहे हो?" भागू ने आहिस्ता से जवाब दिया, “कोन्टीन में...”

“तो क्या अब तुम्हारे हिसाब से क्वारंटीन दोज़ख़ नहीं... भागू?”

“आपने जो आने से इन्कार कर दिया, बाबू जी... और चारा ही क्या था। मेरा ख़याल था, वहाँ हकीम की मदद मिल जाएगी और दूसरे मरीज़ों के साथ उसका भी ख़याल रखूँगा।”

“यहाँ रख दो चारपाई... अभी तक तुम्हारे दिमाग़ से दूसरे मरीज़ों का ख़याल नहीं गया...? बेवक़ूफ़...”

चारपाई अन्दर रख दी गई और मेरे पास जो भी सबसे अच्छी दवा थी, मैंने भागू की बीवी को पिलाई और फिर मैं अपने उस दुश्मन से मुक़ाबला करने लगा जिसका नाम था प्लेग। भागू की बीवी ने आँखें खोल दीं।

भागू ने एक भावुक अन्दाज़ में, “आपका एहसान सारी उम्र न भूलूँगा, बाबूजी।”

मैंने कहा, “मुझे अपने पिछले व्यवहार पर बहुत अफ़सोस है भागू... ईश्वर तुम्हें तुम्हारी सेवा का फल तुम्हारी बीवी को ठीक करने की सूरत में दे।”

उसी वक़्त मैंने अपने दुश्मन बीमारी को अपना आख़िरी तिकड़म इस्तेमाल करते देखा। भागू की बीवी के लब फड़कने लगे। नब्ज़ जो कि मेरे हाथ में थी, कम होकर कंधे की तरफ़ सरकने लगी। उसकी बीमारी जीत रही थी मैं हार रहा था। मैं चारों खाने चित हो रहा था। मैंने शर्मिंदगी

से सर झुकाते हुए कहा, "भागू! बदनसीब भागू! तुम्हें अपनी क़ुर्बानी का ये अजीब सिला मिला है... आह!"

भागू फूट फूट कर रोने लगा।

वो नज़ारा कितना दर्दनाक था, जबकि भागू ने अपने बिलबिलाते हुए बच्चे को उसकी माँ से हमेशा के लिए अलग कर दिया और मुझे अफ़सोस के साथ लौटा दिया।

मेरा ख़याल था कि अब भागू अपनी दुनिया में अंधेरा पाकर किसी का ख़याल न करेगा... मगर उसे अगले रोज़ फिर मैंने बढ़ चढ़ कर मरीज़ों की सेवा करते देखा। उसने सैकड़ों घरों को बेसहारा होने से बचा लिया... और अपनी ज़िंदगी को ग़ैरज़रूरी समझा। मैंने भी भागू से प्रेरणा लेकर मेहनत से काम किया। क्वारंटीन और हस्पतालों से मुक्त होने के बाद अपने बचे हुए समय में मैं शहर के ग़रीब तब्क़े के लोगों के घर-घर गया, जो कि नाले किनारे गंदगी में होने की वजह से बीमारी के घर में बसे हुए थे।

कुछ ही दिनो में माहौल बीमारी से बिलकुल मुक्त चुका था। शहर को बिल्कुल धो डाला गया था। चूहों का कहीं नाम-ओ-निशान दिखाई न देता था। सारे शहर में सिर्फ़ एक-आध केस होता जिसकी तरफ़ फ़ौरन ध्यान दिए जाने पर बीमारी के बढ़ने का कोई उम्मीद बाक़ी न रही।

शहर में कारोबार ने अपनी हालत पहले जैसे सामान्य इख़्तियार कर ली, स्कूल, कॉलेज और दफ़्तर खुलने लगे।

एक बात जो मैंने शिद्दत से महसूस की, वो ये थी कि बाज़ार में गुज़रते वक़्त चारों तरफ़ से उंगलियाँ मुझीं पर उठतीं। लोग एहसानमंद निगाहों से मेरी तरफ़ देखते। अख़बारों में तारीफ़ के साथ मेरी तस्वीर छपी। उस चारों तरफ़ से हो रही तारीफ़ की बौछार ने मेरे दिल में कुछ ग़ुरूर सा पैदा कर दिया।

आख़िर एक बड़ा शानदार जलसा हुआ जिसमें शहर के बड़े बड़े रईस और डॉक्टर आमंत्रित किए गए। वज़ीर-ए-बलदियात ने उस जलसे की अध्यक्षता की। मुझे अध्यक्ष के बग़ल में बिठाया गया, क्यूँकि वो दावत मेरे ही सम्मान में दी गई थी। हारों के बोझ से मेरी गर्दन झुकी जाती थी और हमारा व्यक्तित्व बहुत ख़ास मालूम होता था। पर ग़ुरूर निगाह से मैं कभी उधर देखता कभी इधर... मानवता की सेवा करने के लिए कमिटी, मेरा धन्यवाद करते हुए मुझे एक हज़ार एक रुपये का इनाम दे रही थी।

जितने भी लोग मौजूद थे, सबने मेरे सहकर्मियों और ख़ासकर मेरी तारीफ़ की और कहा कि पिछली महामारी के आफ़त में जितनी जानें मेरी दिन-रात मेहनत और कोशिश से बची हैं, उनका शुमार नहीं। मैंने न दिन को दिन देखा, न रात को रात, अपनी ज़िंदगी को क़ौम की ज़िंदगी समझा और अपने धन को अपने क़ौम का धन, महामारी वाले क्षेत्रों में पहुँचकर मरते हुए मरीज़ों इलाज किया, दवा पिलाई!

वज़ीर-ए-बलदियात ने मेज़ के बाएँ पहलू में खड़े हो कर एक पतली सी छड़ी हाथ में ली और मौजूद लोगों से बात करते हुए उनका ध्यान दिवार पर लटके नक़्शे की तरफ़ दिलाया जिसमें रोज़ सेहतमंद होते मरीज़ों का ग्राफ़ ऊपर की ओर बढ़ता जा रहा था। आख़िर में उन्होंने नक़्शे में वो दिन भी दिखाया जिस दिन मेरे निगरानी में चौव्वन (54) मरीज़ रखे गए और वो सारे के सारे सेहतमंद हो गए।। यानी नतीजा सौ फ़ीसदी कामयाबी का रहा और वो मेरी सफलता की लकीर अपनी सर्वोच्च स्थान तक पहुँच गई।

इसके बाद वज़ीर-ए-बलदियात ने अपने भाषण में मेरी हिम्मत को बहुत कुछ सराहा और कहा कि लोग ये जान कर बहुत ख़ुश होंगे कि बख़्शी जी अपनी सेवा के बदले लेफ़्टीनेंट कर्नल बनाए जा रहे हैं।

पूरा हॉल तारीफ़ की आवाज़ों और तालियों से गूँज उठा।

उन ही तालियों के शोर के बीच मैंने अपनी ग़ुरूर से भरी गर्दन को उठाया। कमिटी के अध्यक्ष और मौजूद लोगों का शुक्रिया अदा करते हुए मैंने एक लम्बा चौड़ा भाषण दिया, जिसमें तमाम बातों के अलावा मैंने बताया कि डॉक्टरों का ध्यान सिर्फ़ हस्पताल और क्वारंटीन तक ही सीमित नहीं था, बल्कि ग़रीब तब्क़े के लोगों के घरों की तरफ़ भी उनका ध्यान उतना ही था। वो लोग अपनी मदद करने के काबिल बिल्कुल नहीं थे और वही ज़्यादा-तर इस महामारी का शिकार हुए। मैं और मेरे सहकर्मियों ने बीमारी पनपने वाली सही जगह को तलाश किया और अपना ध्यान बीमारी को जड़ से उखाड़ फेंकने में लगा दिया। क्वारंटीन और हस्पताल से छूटकर हमने रातें उन ही ख़ौफ़नाक जगहों में गुज़ारीं।

उसी दिन जलसे के बाद जब मैं बतौर एक लेफ़्टीनेंट कर्नल के अपनी ग़ुरूर से लदी गर्दन को उठाए हुए, हारों से लदा फंदा, लोगों का दिया एक हज़ार एक रुपये का वो छोटा सा तोहफ़ा जेब में डाले घर पहुँचा, तो मुझे एक तरफ़ से आहिस्ता सी आवाज़ सुनाई दी, “बाबू जी... बहुत बहुत मुबारक हो।”

और भागू ने मुबारकबाद देते वक़्त वही पुराना झाड़ू क़रीब ही के गंदे हौज़ के एक ढकने पर रख दिया और दोनों हाथों से गमछा खोल दिया। मैं भौंचक्का सा खड़ा रह गया।

“तुम हो...? भागू भाई!” मैंने बड़ी मुश्किल से बोला... “दुनिया तुम्हें नहीं जानती भागू, तो न जाने... मैं तो जानता हूँ। तुम्हारा यीशु तो जानता है... पादरी लाम, आबे के बेमिसाल चेले...तुझ पर ख़ुदा की रहमत हो...!"

उस वक़्त मेरा गला सूख गया। भागू की मरती हुई बीवी और बच्चे की तस्वीर मेरी आँखों में खिंच गई। हारों के बोझ से मुझे मेरी गर्दन टूटती हुई मालूम हुई और पैसों के बोझ से मेरी जेब फटने लगी। और... इतनी इज़्ज़त हासिल करने के बावजूद मैं बे-तौक़ीर हो कर इस क़द्र-शनास दुनिया का मातम करने लगा।

विद्या दान

बहुत से लोगों में दया, उदारता, परोपकार आदि सदगुण होते हैं समझबूझ और दूरदृष्टि से उनका सदुपयोग नहीं होता उनका विपरीत परिणाम दिखाई देते हैं। गुनाहगारों के प्रति दया दिखाना उनके गुनाहगारों के दुष्ट कार्यों में भाग लेने जैसा होगा। दान देना अच्छा है, यह दिखाने के लिए कि हम बड़े दानवीर हैं देखना चाहिए कि सही व्यक्ति है कि नहीं ऐसा ना होने से दान लेने वाले को कहीं मुफ्तखोर बनाने का काम तो नहीं कर रहे। धन-दान की तरह ही अन्न-दान करने से दुगुणों को बढ़ाने से उसके भयंकर परिणाम समाज को भुगतने पड़ेंगे। दया, दानधर्म आदि के संबंध में मनुष्य की प्रवृत्ति का उद्देश्य दूसरों के दुख बांटना, संकट या विपत्ति में मदद करना होना चाहिए। उसी से परोपकारी मनुष्य अन्य लोगों की मदद करता है। परंतु दुख, संकट, विपत्ति आते ही हैं आलसी, नशेड़ी और मूर्ख मनुष्यों पर। उन पर आई विपत्ति की वजह उनके ही अवगुण होते हैं। यह उनके लिए एक शिक्षा होती है ये उस दुर्गुणी मनुष्य के दुर्गुणों को नष्ट करने में उपयोगी होती हैं, ऐसा हम अनुभव करते हैं। सरकार गुनाहगार को कठोर दण्ड देकर नसीहत देती है। गुनाहगार इस भय से चोरी, जबर्दस्ती करने आदि गुनाह करने में हिचकते हैं और उनसे दूर रहते हैं। उसी तरह दरिद्रता, दुख, कष्ट आदि की नसीहत के भय से मनुष्य में सुधार होने से आलस, अविचार, फिजूलखर्ची आदि दुर्व्यसनों से मनुष्य दूर होगा और वह परिश्रमी बनेगा। दूसरों पर निर्भर नहीं रहेगा। इनको दया, दान धर्म करने का जिन्हें शौक है ऐसे लोगों को विचार करना चाहिए कि उनके किए का क्या परिणाम होगा। सत्कृत्यों से ही समाज पर बुरा परिणाम न पड़ने की संभावना है।

आदमी के सुधर जाने पर उसे दूसरों से मदद लेने में भी लज्जा आती है। उस पर कभी संकट पड़े और मजबूरन दूसरों की मदद से अपना निर्वाह करना पड़ जाए तो भी उसे यह चिंता रहती है कि मैं खुद पर आए संकट को अपने उद्योग और श्रम से निवारण करने में कैसे समर्थ होऊंगा। धर्म कार्यों में दानी को पैसा देना अच्छा लगता है, परंतु उसे लेने वाले को अच्छा ना लगे ऐसी समझ आ जाए तो दान, धर्म, दया, उपकार आदि गुणों का समाज पर दुष्प्रभाव नहीं बल्कि कल्याणकारी प्रभाव पड़ेगा।

आलस्य, पर निर्भरता आदि दुर्गुण ना बढ़ें और मनुष्य के व्यक्तित्व में सद्गुण बढ़ाने में कारगर कोई धर्म है, तो वह विद्यादान है। इस धर्म से विद्या देने वाला और विद्या ग्रहण करनेवाला दोनों ही इससे खरे मनुष्य बनते हैं। इस धर्म की शक्ति से मनुष्य का पशुत्व लुप्त हो जाता है। विद्या देनेवाला धैर्यवान, निर्भय बनता है और विद्या लेनेवाला सामर्थ्यवान और समझदार बनता है। अंग्रेज विद्वान विद्यादान करके लोगों को समझदार बनाते हैं। ये सच्चे विद्वान हैं। पर हमारे विद्वान लोगों को अशिक्षित रखने में माहिर हैं। वे पक्के मूर्ख हैं। ईरानी लोग हिंदुस्तान में घुसे और हिंदुस्तान को अपने बाप की जायदाद मानने लगे। हूण आए तो ईरानियों ने उनसे कहा- "यह देश तुम्हारा नहीं है"। परंतु हूण घुस आए और वे अपने बाप की जायदाद मानकर रहने लगे। हिंदुस्तान मुगलों के बाप का था या नहीं कौन जानता? जहां उन्होंने अपने पांव रखे उनका हो गया । इतिहास ऐसा है कि हिंदुस्तान इण्डियन लोगों का है, उन पर विदेशियों ने राज किया। उसका कारण उनका अज्ञानता थी। दो हजार वर्षों तक इण्डियन अज्ञानता में रहे और पशुओं की तरह जीवन जीते रहे, यह महान आश्चर्य नहीं है यह भट्ट-भिक्षुकों का षड़यंत्र था। यह अपने अंग्रेजी ज्ञान से मालूम हुआ। विद्यादान करने और विद्या प्राप्त करने में लोगों की मदद करने से उनकी इच्छा बढ़ी इसके बाद ही हमारी प्रगति का मार्ग खुलेगा। इससे ही समाज का हित होगा और हरेक के जीवन में सुख बढ़ेगा।

अंग्रेज सरकार ने ज्ञानदान के लिए पाठशालाएं खोली, परंतु ये थोड़ी सी थी, ऐसी मेरी पक्की समझ है कि यदि ये थोड़ी ही रहें तो सारे हिंदुस्तान को शिक्षित होने में डेढ़ सौ वर्ष और लगेंगे। इसके बावजूद मैं कहती हूं कि सरकार को शिक्षा के प्रसार को गति प्रदान करनी चाहिए, जब तक सभी लोग को शिक्षित न हो जाएं उनको यहां से नहीं जाना चाहिए। महार, मांग आदि शूद्र-अतिशूद्र हर गांव में बारह बलुते (हिस्सेदार) और बारह आलुते (लेनदार) और चरवाहे, माली, किसान आदि लोग रहते हैं। इनके पास ज्ञान, कला, चिवटपणा आदि गुण हैं, परंतु इनके इनका आज तक सरकार ने उपयोग नहीं किया। राजाओं ने उनके गुणों की खिल्ली उड़ाकर और अनदेखी करके राज किया। निस्संदेह शूद्रों-अतिशूद्रों के पास अनेक गुण हैं लेकिन अज्ञानता के कारण वे यह नहीं जानते कि अपनी बुद्धि और कौशल का उपयोग कैसे और कहां करें। पता चले कि अपने देश में हम क्या पैदा करें जिसका लोग उपयोग कर सकें। लोगों को कौन सी चीज की जरूरत है जिससे उनका और देश को भला होगा। यह उन्हें सूझता नहीं और सरकार भी उन्हें शिक्षित नहीं करती। यही कारण है कि इन शूद्रों-अतिशूद्रों जातियों के लोग मूर्ख स्वभाव के हैं। उनको कोई मार्ग दिखानेवाला नहीं होता है, वे अपनी बुद्धि से या साहस से कोई भी उद्योग करने की हिम्मत नहीं जुटा पाते।उनका स्वभाव ही मिलनसार नहीं, कटु बन गया है अपना जीवन कैसे सुधारें यह भी नहीं सूझता और ऐसे अज्ञानी कभी आधा पेट और कभी-कभी भूखे ही रह जाते हैं। ऐसे लोगों को अपनी जीविका के लिए दयालु सरकार को मार्ग दिखाना चाहिए या गांवों के धनिक उद्योग-धंधे स्थापित करें तो गांव के मजदूरों के अपने गुणों का धनिकों के लिए कैसे उपयोग होगा, ऐसा व्यवहार रखना चाहिए। आज अगर वे ऐसा व्यवहार नहीं करेंगे तो उस परिस्थिति का दोष माथे लगेगा यह बताने की जरूरत नहीं है।

सूचना कानून इतिहास और बदलाव

□ राजविंदर सिंह चंदी

संविधान सभा के सदस्यों का मकसद था कि स्वतंत्रता आंदोलन के मूल्य/सरोकार साकार रूप ले सकें, इसलिए वो जनता को संविधान में ज्यादा से ज्यादा अधिकार दिए जाने के पक्ष में थे। उनका मानना था कि इससे लोकतंत्र मजबूत होगा i

भारतीय संविधान के अनुच्छेद 19 (1)(a) के अनुसार हर भारतीय नागरिक को बोलने व अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का अधिकार प्राप्त है। हमने संसदीय लोकतंत्र अपनाया है। जनतंत्र में राज्य की सारी शक्तियाँ जनता में निहित होती हैं। जनता द्वारा अपने कार्यों जिनमें नीतियां, कानून-व्यवस्था, परियोजनाओं, निर्णय, प्राशसनिक गतिविधियों का क्रियान्वयन आदि शामिल है, के लिए सरकार चुनी जाती है।

यह भी कटु सत्य है कि एक बार सरकार चुने जाने के बाद उस पर जनता का कोई नियंत्रण नहीं रहता, इसे भारतीय जनतंत्र की खामी या अधुरापन भी कह सकते हैं।वैसे तो संविधान के अनुसार सरकार संसद के प्रति जवाबदेह है और संसद जनता के प्रति यधपि यह भी सत्य है कि बिना पारदर्शिता के जवाबदेही के कोई मायने नहीं हैं। जवाबदेही की मुखर अभिव्यक्ति पारदर्शिता है।

दूसरा वही लोकतंत्र कामयाब कहा जा सकता है, जिसमें जनता की भागीदारी ज्यादा से ज्यादा हो अन्यथा तय समय सीमा तक सरकार जनता से वोट लेकर जनहित नहीं, राज करती है। सरकार का उद्देश्य

जनहित में नीतियाँ न बनाकर चंद लोगों के सुख व स्वार्थों की पूर्ति करना मात्र रह जाता है। जिस कारण भ्रष्टाचार, भाई-भतीजावाद, सार्वजनिक संसाधनों की लूट, तानाशाही आदि बीमारियां पनपती हैं।

तीसरा गोपनीयता तानाशाही की तरफ ले जाती है। अंग्रेज सरकार ने 1889 में सरकारी गोपनीयता कानून सूचना की ताकत को अवरुद्ध करने के लिए बनाया था ताकि सरकार द्वारा किए जाने वाले कार्य कारनामों यानि के जनता विरोधी नीतियों, कार्यों को जनता से छुपाया जा सके। गोपनीयता और भ्रष्टाचार एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। गोपनीयता से जुड़ी एक रोचक बहस 1957 में मूंदड़ा घोटाला कांड को लेकर संसद में हुई। सरकार के इशारे पर भारतीय जीवन बीमा निगम ने हरिदास मूंदड़ा की कंपनियों से 1.25 करोड़ रूपये के शेयर खरीदे। तत्कालीन सांसद फिरोज गाँधी ने मामले को संसद में उठाया और पत्रिका में छपे तत्कालीन केंद्रीय वित्त मंत्री टी.टी कृष्णमचारी व् वित् सचिव के बीच हुए पत्र-व्यवहार को सबूत के तौर पर पेश किया।

पूंजीपति समर्थक सांसदों ने फिरोज गाँधी पर गोपनीय दस्तावेजों को हासिल करने के जुर्म के आरोप लगाए। तत्कालीन स्पीकर ने लम्बे विचार-विमर्श के बाद फैसला दिया कि अगर लोकसभा सदस्य किसी दस्तावेज की प्रमाणिकता की जिम्मेदारी लेने को तैयार हैं तो उन्हें सदन के समक्ष प्रस्तुत किया जा सकता है, बेशक चोरी से ही हासिल किये हों। स्वतंत्रता प्राप्ति के साथ ही हमारे देश के भ्रष्ट नेताओं, नौकरशाहों और पूंजीपतियों का नापाक गठजोड़ बन गया था, जो मूंदड़ा घोटाला कांड ने साबित किया। यह गठजोड़ भारतीय लोकतंत्र की बहुत बड़ी दुखती रग है। मुंबई उच्च न्यायालय के न्यायाधीश एम सी छांगला ने जांच में मुदड़ा कांड के आरोप जांच में सही पाए और वित् मंत्री को इस्तीफा देना पड़ा था। सरकारी गोपनीयता कानून को स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद खत्म करने की बजाय सरकार द्वारा बरकरार रखा गया।

इसके इलावा भ्रष्टाचार के अनेकों मामले इस मामले से पहले भी और बाद में भी उजागर हुए है। जो भारतीय लोकतंत्र के माथे पर कलंक हैं। सरपंच से लेकर प्रधानमंत्री ग्राम सचिव से लेकर मुख्य सचिव तक पर भ्रष्टाचार के आरोप लगे हैं और इनका भी भ्रष्टाचार में संलिप्त हो जाना कोई आश्चर्य की बात नहीं है। अब तक अनेकों घपले-घोटाले स्वतंत्र भारत में हो चुके हैं।

1996 में सुप्रीम कोर्ट ने राजनेता राजनारयण मामले में महसूस किया कि लोग जाने बगैर बोलने व स्वयं की अभिव्यक्ति कैसे करें। लोकतंत्र में जनता ही मालिक होती है क्योंकि देश को चलाने के लिए वह प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष तौर पर कर देती है। लोकतंत्र में सरकार जनता के लिए होती है जनता ही हितधारक (sटीakeholder) होती है। लंबे समय से सूचना दिए जाने की मांग भारत में होती रही।

2004 में कांग्रेस के नेतृत्व में प्रगतिशील गठबंधन की सरकार बनी, जो वामपंथी दलों के बाहर से दिय जा रहे समर्थन से चल रही थी। इस कांग्रेस के नेतृत्व वाले गठबंधन को समर्थन के लिए न्यूतम साँझा कार्यक्रम व्यापक दबाव में बनाना पड़ा। इस सरकार ने दवाब में अनेकों जनपक्षीय कार्य किए। जिसका प्रतिफल अनको जनपक्षीय अधिनियमों का पारित होना था।

1996 में सुप्रीम कोर्ट ने राजनेता राजनारयण मामले में महसूस किया कि लोग जाने बगैर बोलने व स्वयं की अभिव्यक्ति कैसे करें। लोकतंत्र में जनता ही मालिक होती है। वह प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष तौर पर कर देती है। लोकतंत्र में सरकार जनता के लिए होती है जनता ही हितधारक (sटीakeholder) होती है। लंबे समय से सूचना दिए जाने की मांग भारत में होती रही।

इस अधिनियम के पास होने पर बोलने व अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के मौलिक अधिकार को ताकत मिली। अनेकों विद्वानों ने इस अधिनियम की सराहना की। सामाजिक कार्यकर्ता अरुणा राय ने कहा

सूचना के अधिकार को सिर्फ भ्रष्टाचार के भंडाफोड़ तक सीमित कर देने की बजाय समूचे लोकतंत्र का कायाकल्प करने और एक वैकल्पिक राजनीति से जोड़कर देखना होगा। यह अधिकार भारतीय लोकतंत्र के मौजूदा संकट को हल करने और नीतियों के निर्माण और क्रियान्वयन में जन भागीदारी सुनिश्चित करने का एक हथियार हो सकता है।

अंतत: लंबे समय बाद सूचना देने की भारतीय जनता की मांग पूरी हुई। यूपीए सरकार ने 11 मई 2005 को सूचना अधिकार अधिनियम पारित किया, जिसे पूरे 121 दिन बाद, 12 अक्टूबर 2005 को संपूर्ण भारत में कर दिया गया।

सुप्रीम कोर्ट ने लोक प्रहरी बनाम यूनियन ऑफ इंडिया 2018 (2) आरसीआर (सिविल) केस में सूचना की महत्ता पर कहा कि नागरिक अंततः लोकतंत्र में प्रभुसत्ता संपन्न के भंडार हैं, जिनकी राज्य के हर नाजुक निष्पादन लेखा परीक्षा, उसके माध्यमों और अवलंबी अधिकारिक सूचना की पहुंच आवश्यक है। सूचना ही एक ऐसा माध्यम है जो नागरिक को सरकारी दफ्तर रखने वाले या सरकारी दफ्तर की आकांक्षा रखने वालों के तार्किक चयन करने के सशक्त बनाती है।

अंजलि भारद्वाज बनाम यूनियन ऑफ इंडिया 2019 (3) आरसीआर (सिविल) केस में माननीय सुप्रीम कोर्ट ने कहा कि सूचना अधिकार अधिनियम का अर्थ लोगों को केवल सेवा देना नहीं है बल्कि उनके बोलने की आजादी को सुनिश्चित करना है। सुशासन जो की जीवंत लोकतंत्र के लिए आवश्यक घटक है, अगर इस अधिनियम को सही तरीके से लागू किया जाता है तो लक्ष्य हासिल किया जा सकता है। सुशासन लेना सविधान की दृष्टि है, इसका देश के विकास के साथ महत्वपूर्ण संबंध है।

सूचना अधिकार अधिनियम एक ऐसा यंत्र है, जो भारत के नागरिकों को सशक्त करता है उन्हें शक्ति देता है। यह स्वतंत्र भारत का एक बहुत थोड़े समय में बहुत ही ज्यादा कामयाब होने वाला कानून साबित हुआ है, जिसने नागरिकों को सरकारी तंत्र से सवाल पूछने का बल दिया। इस ऐतिहासिक अधिनियम का उद्देश्य जवाबदेही के सिद्धांत को मजबूत करते हुए सरकारी तंत्र के कार्यों में पारदर्शिता लाकर नागरिक केंद्रीय पंहुच बनाना है। यह चैकस एंड बैलेंस के सिद्धांत को मजबूत करता है। इससे देश के शासन में पारदर्शिता, ईमानदारी, जवाबदेही बढ़ेगी, जो भ्रष्टाचार की कुशलता से ग्रस्त है। यह अधिनियम देश के संविधान में बोलने की आजादी के मौलिक अधिकार को मजबूत करने की सोच के साथ पारित किया गया। सूचना अधिनियम 2005 को बारीकी से समझने की आवश्यकता है ताकि सूचना आवेदन से सही व उसके मूल उद्देश्यों की पूर्ति के लिए प्रयोग किया जा सके।

वैसे तो सुचना अधिनियम की धारा 4 सभी विभागों से उपेक्षा करती है कि वह विभाग से संबंधित सभी जानकारियां इंटरनेट और अन्य माध्यमों से इस तरह प्रकाशित करेंगे कि नागरिकों के द्वारा देखा व पढ़ा जा सके। अगर इस धारा का प्रयोग सही से किया जाए तो बहुत सी सूचनाएं बिना आपत्ति से नागरिकों को उपलब्ध हो जाए।

सूचना के अधिकार अधिनियम में 2019 का संशोधन

मोदी 2.0 सरकार ने सूचना अधिकार अधिनियम में बदलाव के लिए 19 जुलाई 2019 को लोकसभा में अधिनियम की धाराओं 13,16 व 27 जो केंद्रीय मुख्य सूचना आयुक्त, केंद्रीय आयुक्तों, राज्य मुख्य सूचना आयुक्तों, राज्य आयुक्तों की पदावधि, वेतनमान, सेवा शर्तों से संबंधित हैं। संशोधन बिल 22 जुलाई 2019 को भाजपा ने अपने बहुमत के बल पर लोकसभा से बहुत जल्दी व बिना व्यापक बहस के पास करवा लिया। इसी तरह से 25 जुलाई 2019 को कुछ दलों जिनमें टीआरएस, बीजेडी, वाईएसआर सी अदि के सहयोग से राज्यसभा से पास करवा लिया।

सात पूर्व केंद्रीय, राज्य मुख्य आयुक्त व अन्य आयुक्तों ने संशोधन बिल को सदनों से वापस लेने की मांग की और सरकार को अपनी चिंताओं से अवगत करवाया। सामाजिक व सूचना कार्यकर्ताओं, बुद्धिजीवियों व विपक्षी दलों ने विरोध प्रदर्शन भी किए। लेकिन सरकार ने बहुमत की ताकत से एक सप्ताह के अंदर संशोधन बिल पास करवा लिया। 13 अगस्त 2019 को राष्ट्रपति श्री रामनाथ कोविंद की मंजूरी मिलने से लागू हो गया है। यह संशोधन इलेक्ट्रॉनिक मीडिया की सुर्खियाँ व् बहसों का हिस्सा नहीं बना, मीडिया की गैर मुद्दों पर बहसों के शोरगुल में सरकार अपनी राजनैतिक इच्छा पूरी कर गई।

कांग्रेस, वामपंथी पार्टियों, डीएमके आदि दलों ने संसद के दोनों सदनों में पुरजोर विरोध किया, तार्किक सवाल उठाये, गंभीर चिंताएँ पेश की और संशोधित बिल को व्यापक बहस हेतु संसद की विभिन्न समितियों को भेजने के प्रस्ताव पेश किए लेकिन सरकार के बहुमत के आगे उनकी एक न चली, सरकार ने बिना व्यापक विचार-विमर्श , बहस, बिना किसी संसदीय समिति को भेजे व जनता के सलाह मशविरे के बिल को पास करवा लिया।

1. इस संशोधन ने केंद्रीय मुख्य आयुक्त, केंद्रीय आयुक्तों, राज्य मुख्य आयुक्तों और राज्य आयुक्तों की पदावधि 65 वर्ष तक की आयु तक तय कर दी। पहले इनका कार्यकाल 5 वर्ष का था या 65 वर्ष की आयु पूरा होना पर सेवानिवृत्त करने का प्रावधान था। इस संशोधन से मूल अधिनियम से 5 वर्ष की पदावधि हटा दी गई है।

2. केंद्रीय मुख्य आयुक्त व केंद्रीय आयुक्तों का वेतन व भत्ते मुख्य निर्वाचन आयुक्त व निर्वाचन आयुक्तों के समान दिए जाने का प्रावधान था इसी तरह से राज्य मुख्य आयुक्त व राज्य आयुक्तों को वेतनमान में भत्ते राज्य के मुख्य सचिव के समान दिए जाने का प्रावधान मूल अधिनियम में किया गया था, जिसको संशोधित करके सरकार द्वारा वेतन व भत्ते खुद तय करने का अधिकार ले लिया है अगर किसी सेवानिवृत्त व्यक्ति को मुख्य सूचना आयुक्त या आयुक्त नियुक्त किया जाता है तो उसको मिल रही पेंशन को सरकार द्वारा तय वेतनमान से कम कर दिया जाएगा।

3. संशोधन ने राज्य सरकारों से राज्यों मुख्य सूचना आयुक्त व आयुक्तों की नियुक्ति का अधिकार छीन लिया है। यहां पर यह बताना आवश्यक है कि सूचना आयोग एक अर्ध न्यायिक निकाय (quasi judicial बीody) है जो अपनी कार्यप्रणाली न्यायालय की तरह से चलाता है। अपीलों, शिकायतों पर अपने फैसले दोनों पक्षों को सुन कर सुनाता है।

संशोधन से सूचना आयोग की स्वतंत्रता के संबंध में अनेकों शंकाएं जनता में पैदा हुई है

1. यह संशोधन सरकार को बेतहा शक्ति देता है। सब कुछ सरकार द्वारा तय होगा। सूचना आयोगों की निष्पक्षता व स्वायत्तता प्रभावित हो सकती है ऐसी शंका व्यक्त की गई है कि आयुक्त सरकार के वफादार बाबू अधिकारी बनकर रह जायेंगे।

2. यह संशोधन लोगों के हाथ कमजोर और सरकार के हाथ मजबूत करेगा। इस संशोधन से राज्य सरकारों को राज्य के मुख्य सूचना आयुक्तों व आयुक्तों के चयन करने के अधिकार को छिनता है जो सहकारी संघवाद के सिद्धांत के विपरीत है।

3. शासन का स्थापित नियम है कि संस्थाओं का कार्यकाल निश्चित हो ताकि वो बिना भय व स्वंतन्त्रता से अपने कर्तव्यों का निर्वाह कर सके यद्धपि संशोधन से मुख्य सूचना आयुक्त अन्य आयुक्त केंद्र सरकार की दया से पद पर रह सकेंगे।

4. यह संशोधन बहुत जल्द संसद के दोनों सदनों में बिना व्यापक बहस, विचार-विमर्श और संसदीय समितियों को बिना भेजें पारित किया गया। जिससे इसका क्रांतिकारी चरित्र व स्वरूप बदल गया है। अब आयुक्त केवल सरकार वरिष्ठ अधिकारी बनकर रह जाएंगे।

5. इस संशोधन ने केंद्र व राज्य के मुख्य आयुक्त व अन्य आयुक्तों को सुप्रीम कोर्ट के जज के समान स्तर (sटीaटीus) को खत्म कर दिया।

6.इस संशोधन से जन सूचना अधिकारी जनता को समय पर सूचना देने में आनाकानी करेंगे, सूचना नहीं देंगे या गलत सूचना देंगे।

7.इस संशोधन का उद्देश्य सूचना आयोगों को पूर्णत: सरकारी नियंत्रण में लाना प्रतीत होता है, इसके पीछे नौकरशाही, राजनेताओं व कारपोरेट के निहित स्वार्थ छुपे हुए हैं जो जनता को उनके खिलाफ मिलने वाली सूचनाएं या कहिए गलत कार्य पर लगाम लगाने वाली जानकारियां से मुक्ति मिल सकती है।

8.यह संशोधन पारदर्शिता जवाबदेही व चेक एंड बैलेंस ऑफ पावर के सिद्धाँत के खिलाफ है। इससे सारी शक्ति सरकार को मिल जाएगी।

9. केंद्रीय सूचना आयोग ने कुछ बहुत ही महत्वपूर्ण निर्णय दिए थे जिनमें नोटबंदी, आरबीआई, एनपीए आदि शामिल है, जो सरकार के खिलाफ जाते हैं। जिससे सोशल मीडिया पर सरकार की किरकिरी हुई। सरकार ने इस मंशा से भी संशोधन किया हो सकता है।

10. यह संशोधन संविधान के अनुच्छेद 14, 19 (1) और 21 में दिए गए मौलिक अधिकारों का उल्लंघन है। इससे सूचना आयोग का सुरक्षा कवच खत्म हो जाएगा और जनता को उच्च पदों पर आसीन व्यक्तियों के खिलाफ सूचना, ऐसी सूचनाएं जो भ्रष्टाचार का भंडाफोड़ करती हो और लोकतंत्र को मजबूत करती हो आदि मिलना मुश्किल हो जाएगा।

2017 में एक सूचना कार्यकर्ता की अपील पर केंद्रीय सूचना आयुक्त श्री श्रीधर अचारयूल्य ने दिल्ली विश्वविद्यालय को भारत के प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी जी का दिल्ली विश्वविद्यालय के रिकॉर्ड से संबंधित निरीक्षण करने का आदेश पारित किया था। कुछ दिन बाद केंद्रीय मुख्य सूचना आयुक्त श्री आर के माथुर ने मानव संसाधन मंत्रालय का कार्यभार वापिस ले लिया था।

आर.बी.आई. ने बैंकों के बड़े डिफाल्टरों की सूचना आवेदक को देने से मना कर दिया था। सुप्रीम कोर्ट ने आरबीआई बनाम जयंतीलाल मिस्त्री 2016 ()आरसीआर (सिविल) 568 में आरबीआई को डिफॉल्टरों की सूचना देने का आदेश पारित किया था।

जब अधिनियम का खाका यूपीए सरकार ने संसद में पेश किया था तो उस बिल पर व्यापक विचार-विमर्श हुआ। मूल बिल में केंद्रीय मुख्य सूचना आयुक्त व आयुक्तों का वेतनमान सचिव व अतिरिक्त सचिव के समान रखने की बात थी परंतु संसदीय समिति जिसमें उस समय भाजपा के सांसद और वर्तमान में भारत के राष्ट्रपति श्री रामनाथ कोविंद जी भी सदस्य थे, ने वेतनमान मुख्य निर्वाचन आयुक्त व निर्वाचन आयुक्तों के समान करने की सिफारिश की थी, जिसको संसद ने सही मानकर पास किया था।

चयन प्रक्रिया

पहले केंद्रीय मुख्य सूचना आयुक्त व आयुक्तों की नियुक्ति एक कमेटी द्वारा की जाती थी जिसमें प्रधानमंत्री लोकसभा में विपक्ष के नेता या फिर लोकसभा में बड़े दल के नेता और प्रधानमंत्री द्वारा नियुक्त केंद्रीय मंत्री सदस्य होते है। राज्य के स्तर पर मुख्यमंत्री विपक्ष का नेता या फिर बड़े दल का नेता और मुख्यमंत्री द्वारा चयन मंत्री की एक कमेटी द्वारा की जाती थी। अब स्थिति बदल चुकी है।

हटाने की प्रक्रिया

अगर किसी मुख्य सूचना आयुक्त या किसी आयुक्त के खिलाफ कोई आरोप लगते थे तो ऐसी स्थिति में सुप्रीम कोर्ट का जज जांच करके रिपोर्ट देगा अगर आरोप सही पाए जाते थे तब राष्ट्रपति उस मुख्य सूचना आयुक्त या आयुक्त को हटा सकता था।
संशोधन से स्थिति बदल चुकी है अब सरकार अपनी मनमर्जी से हटा सकती है।

अन्य महत्वपूर्ण संस्थानों की तरह से सूचना आयोग जो महत्वपूर्ण संस्था थी, सरकार ने संशोधन अधिनियम 2019 द्वारा इस संस्था को पिंजरे का तोता बना लिया है।

इस संशोधन के खिलाफ कांग्रेस के नेता श्री जयराम रमेश ने सुप्रीम कोर्ट में मौजूदा संशोधनों को चैलेंज किया है और सुप्रीम कोर्ट ने केंद्र सरकार को नोटिस जारी कर दिया।

सूचना का अधिकार अधिनियम 2005 स्वतंत्र भारत के अधिनयमों में सबसे सफलतम अधिनयम है लेकिन सूचना का अधिकार संशोधन अधिनियम 2019 से इस अधिनियम के उद्देश्यों को धक्का लगेगा। यह प्रतिगामी बदलाव प्रतीत होते है, यह तथ्य भविष्य साबित करेगा।

राजविन्द्र चंदी, सामाजिक कार्यकर्ता, एडवोकेट, कुरुक्षेत्र 9416271188

डॉ. पूनम तुषामड़ की कविता

1.
सुनो देव!
मुझे नही चाहिए
तुम्हारे इस भव्य मंदिर
में प्रवेश।
नही चाहिए
तुम्हारा दर्शन और प्रसाद।
क्योंकि..
तुम पत्थरों की
इस सुंदर इमारत में रखे
गढ़े हुए पत्थर हो
और मैं पत्थरो के बीच
पत्थर नही होना चाहती।

2.
मुनिया और स्कूल
माँ सुबह -सवेरे
आवाज लगाती है।
उठो मुनिया!
स्कूल को जाना है,
कहकर झाड़ू उठाकर
काम पे जाती है।
मुनिया, उठती, चलती।
आँखे मलती।

गिरती संभलती।
मुँह धोती,वर्दी पहनती
बस्ता उठाकर स्कूल को
चलती।
गलियों बस्तियों,रेलवे
लाइनों से गुज़रती
'हाथ मे मोर का पंख धरती'

मुनिया स्कूल पहुंचते ही
सहम जाती है।
मोर के पंख वाली मुट्ठी
ओर जोर से कस जाती है।
डरते, झिझकते, मनोति करते
कक्षा के द्वार पर आती है।
अध्यापिका कक्षा में
बच्चों को बालदिवस पर
भाषण देती हुई बताती है।
चाचा नेहरू कहते थे
"बच्चे देश का भविष्य हैं".

दूसरे ही पल
अध्यापिका की नज़र
मुनिया पर जाती है।
वह देखते ही मुनिया को
ज़ोर से चिल्लाती है
तुम..!
आज फिर देर??

तेज़ तमाचे की आवाज़
के साथ अध्यापिका
अनुशासन का पाठ
पढ़ाती है।
तपती धूप में मैदान के
चक्कर कटवाती है।
मुनिया थककर गिर जाती है।
मुझे चाचा नेहरू याद हो आते हैं।

3.
मैं नदी हूं।
रोकने से कब किसी के
मैं रुकी हूं।
बन के निश्छल धार
जल की मै बही हूं।
मै नदी हूं।

जंगल और पर्वत शिखर
को चीरकर ।
मैं धारा की गर्वीली
पुत्री बानी हूं।
में नदी हूं।

मैं नही किसी देव के
केशों से निकली
मै नही फूटी किसी के
तीर से।
मत बनाओ मुझे
किसी तीर्थ की देवी
कर सको ,शीतल करो मन
मेरे निर्मल नीर से।
मैं प्रकृति की सुता ,
में धरा की बालिका बनकर
पाली हूं।
मैं किसी भी ईष्ट के आधीन
बनकर कब रही हूं।
में नदी हूं।

मैं हूं गंगा,मैं ही यमुना।
मैं ही सतलुज, मैं नर्मदा।
में ही रावी,में ही जेहलम।
टेम्स,वोल्गा ओर अमेज़न ।

मेरे ही तट पर बसे हैं
शहर सारे।
मैं न जाति-धर्म में
बांधकर रही हूं।
आश्रय पाते हैं सब
मेरे किनारे।
में विषमता में भी क्षमता
की छवि हूं।
देश और विदेश तक
फैली हुई हूं।
कब किसी के हाथ से
मैली हुई हूं।

मैं बहा ले जाती हूं
दुख-दर्द सारे।
मैं चली हूं बन गति
तोड़े किनारे।
बंधने से बंधनो में।
कब बंधी हूं।
तोड़ सारे बांध में
बढ़ बन आगे बढ़ी हूं।
मैं नदी हूं।

मैं हूं यौवन
मैं ही सावन
मैं ही हूं हर पर्व पावन
मैं हूँ ममता
मैं समर्पण।
मैं तेरे कर्मो की
एकल साक्षी हूं।
में नदी हूं।

मैं हूँ सुर
और मैं ही संगम
मैं हूँ जीवन ।
में समागम।
मैं ही अश्रुधार बनकर
आंख से जग की बही हूं।
मैंने सींचा मन को सबके
प्रेम प्रवाह मै बनी हूं।
मैं नदी हूं।

में हुन शक्ति
में ही आशा ,मैं हूं तो
कैसी निराशा।
में तेरे खेतों में बहती
शीत जल प्रवाहिनी हूं।
बांध जब मुझपर बने तो
दामिनी हूं।
जो करोगे प्रेम तो मै
रागिनी हूं।
झूठी मर्यादाओं में
न मैं बंधूगी।
परांपरा ओर संस्कृति के
नाम पर न मैं दबुंगी।

मैं हूँ निश्छल धार
निष्छल ही रहूंगी।

संत और सूफी बसे
मेरे किनारे
प्रेम और विद्रोह का
संदेश लेकर जो पधारे
उनके मस्तक की छुवन हूं।
उनकी वाणी की गवाह हूं।
उनके काव्य की सजग
जनवाहिनी हूं।
में नदी हूं।

बादलों ने मुझपे

निर्बल जल लुटाया।
पर कभी भूले न
अपना हक जताया
बांधने की भूल न की
खुद कभी पर्वत शिखर ने।
ना कभी रोके रुकी हूं
मैं किसी गांव शहर में।

मैं किसी न कि बपौती
भी नही हूं।
मैं हूँ खुद ही स्वामिनी
स्वतंत्र चिर हूं।
मैं नदी हूं।

नित किये उपक्रम तुमने
स्वार्थ हित को साधकर
आहत प्रकृति को किया
जान पर निशाना साध कर
इन आपदाओं के हो
उत्तरदायी तुम ही
मैं नही हूं।
में नदी हूं।

मेधा के संघर्ष का आह्लाद
हूं मैं।
शोषित पीडित जन की
आवाज़ हुन मैं
संत हेत संघर्ष का आह्लाद हूं मैं।

कब किसी शासक के आगे
मैं झुकी हूं।
लेके जन का साथ मैं
आगे बढ़ी हूं।
मैं नदी हूं।

गर कभी रोके तुम्हारे
मैं कहीं रुक जाऊंगी
तोड़ दूंगी, डैम वहीं
सड़ गल, के ठहरा जल बनी।
सूख जाऊंगी या फिर
मिट जाऊंगी।
मैं तुम्हारे काम की फिर
क्या भला राह जाऊंगी।
मेरा जीवन ही गति है।
रुकना मेरा ध्यय नही है।
मैं सागर का अंग।
सागर से ही मैं
मिलने चली हूं।
मैं नदी हूं।

4.
लोकतंत्र की धूल
देखा आज रास्ते में
एक जीवित नर कंकाल
हाथों की हड्डियों में
कुछ थाम कर खाता हुआ।

चिलचिलाती धूप में
नंगे पांव,ट्रैफिक के बीच
दौड़ता हुआ बचपन
अखबार! अखबार!
आवाज़ लगाता हुआ।

तभी..
पास से गुजरती
सर सर करती
पसीने से तर- ब- तर
हांथों में थमी
लंबी झाड़ू
अपना काम कर जाती है।
मेरी आँखों पर पड़ी
'लोकतंत्र' की धूल को
साफ कर जाती है।

5.
चांद मुझे है भाए अम्मा
रोज शाम को लिए रोशनी
मेरे घर मे आए अम्मां
चाँद मुझे है ,भाए अम्मा।

जब सांझ थोड़ी सी
ढल जाती है।
सब घर बत्ती जल जाती है
तब मेरी सुनी कुटिया में
बनकर बत्ती आए अम्मा।
चाँद मुझे..

चाँद न पूछे जाट कभी भी।
छुआ छूत की बात कभी भी।
जैसा पंडित -ठाकुर के घर
मेरे घर भी आए अम्मा।
चांद मुझे है भाए अम्मा।

नही जानता भेद भाव यह
सबसे मिलता प्रेम भाव से
नहीं कहीं है,ऊंच नीच।
ये सब को समझाए अम्मां।
चांद मुझे..

मुझे भूख जब लग जाती है।
और तू रोटी न लाती है।
तब चंदा बनकर रोटी
मेरा जी ललचाए अम्मां।
चाँद मुझे है भाए अम्मां।

पर ये मेरी समझ न आए।
जो सब को रोशन कर जाए
उसकी अपनी ही काया में
किसने इतने दाग बनाए?

जब भी देखूं उसे गौर से
आंख मेरी भर आए अम्मा
चाँद की काया के जख्मों में
जीवन अपना दिख जाए अम्मा
चांद मुझे..

एस.एस.पंवार की कविता

माउ

माउ रामायण देखै, माउ बरत करै
माउ घर म्ह जिग्यां-जिग्यां लागेड़ा
टांटियां गा छत्ता तोड़ै, बांगो घर उजाडै,
समझ कोन आवै घर उजाड़न आरा सैंस्कार
रामायण सिखावै'क बरत ?

माउ ओळमो'ईज दय
कै बिंगा पोता बियूँ दूर होग्या
भाई बानै उरलै घरे कोनी आण दे
माउ जिनावरां गा बचिया रुळावै
अब थे'ई बताओ कुकर रेअसी
माउ गा बचिया माउ कनै !

माय स्वीट होम

घणा ई सुणा लागो
फेसबुक माथै घर गी फोटू लगाय'र
बीं पर my sweet home लिखता
बिता ईज स्वीट होम टांटिया गा छता होवै
बिता ईज स्वीट होम सांपां गा बिल होवै
बिता ईज स्वीट होम चिड़िया गा आलणा'र दरख़्त हुवै
बिता ईज स्वीट होम
माकडां गा जाळ हुवै

जिकां गी लास पर थे पक्का घर बणाये बैठ्या हो।

सांप मारण रो पुन्न

सांप पेट घीन्सतो फिरै
अर बो थानै दुखी लागै
तो थारै बाप नै मार दयो
बो कुण सालां'उ बीमार है
अर सरीर घीन्सतो फिरै
भाल कोनी हुवै बो
अर मारण रो पुन हुसी।

कवि

जे कवि हो, अर थारो घर चिमका मारै
कोई जी-जिनावर बठै आसरो कोन लेय सकै
थे टांटियां'गा छत्ता तोड़ो,
माकड़ मारो, कबूतर उडाओ भई अ बीन्ठ न करदे
आलणो बणावती चिड़ी उडाओ
तो म्हनै थारै कवि होण पर संदेह है

घर म्ह

घर म्ह एक कोठो तो इस्यो होणो ई चाईजै
जठै चिड़ी आलणो कर सकै
टांटिया अर भिरडां छत्ता बणाय सकै
माकड़ जाळा कर सकै
अर गिलारी जठै इंडा देयर बच्चा पाळ सकै

नामवर सिंह से एक लम्बी बातचीत

हिन्दी के प्रख्यात आलोचक नामवर सिंह जिन्होंनें कई दशको तक हिन्दी साहित्य को दिशा दी, मूल्यांकन किया और हिन्दी साहित्य के परिवेश को गरमाया। नामवर सिंह के अध्ययन, चिन्तन और व्यक्तित्व का हिन्दी जगत को मैहती लाभ हुआ। पिछले दिनों वे संसार से भौतिक रूप से विदा हो गए दिनांक 19 फरवरी 2019 को उनका देहांत हो गया। प्रस्तुत है नामवर सिंह के जीवन, साहित्य चिन्तन पर प्रकाश डालती संजीव कुमार और ज्ञानेंद्र कुमार संतोष द्वारा की गई बातचीत।

अपने आरंभिक साहित्यिक जीवन के बारे में बताएं?

बात उन दिनों की है जब मैं उदय प्रताप कालेज में इटरमीडिएट की पढाई कर रहा था। कविता लिखने में मेरी रुचि थी। 1941 से कविता से लेखक जीवन की शुरुआत मैंने की। मेरी पहली कविता 'दीवाली' इसी साल 'क्षत्रिय मित्र' पत्रिका (बनारस) में प्रकाशित हुई थी। इसी दौरान पहले शिवदान सिंह चौहान से परिचय हुआ और बाद में प्रगतिशील लेखक संघ से जुड़ा। क्योंकि इस संस्था को चौहान जी ने एक साहित्यिक संस्था के रूप में जिंदा किया था। यह घटना सन् 1946 के आस-पास की

होगी जब मैंने अज्ञेय जी को अपने कालेज में बुलाया था। वे शिलौंग से आए थे। लेकिन अज्ञेय जी कविता और साहित्य पर कुछ बोले ही नहीं, जबकि लोग उम्मीद करते थे कि वे कवि हैं, कविता पर बोलेंगे या 'शेखर एक जीवनी' के लेखक हैं, इसलिए साहित्य पर बात करेंगे लेकिन लोगों को निराशा हुई। वे न कविता पर बोले, न साहित्य पर, वे असमिया मच्छर पर बोले। हां, चाय पर बात करते हुए वे 'शेखर एक जीवनी' पर जरूर बात की। क्योंकि मार्कंडेय ने उनसे शेखर एक जीवनी पर कुछ सवाल पूछे थे। यह अज्ञेय जी से मेरी पहली मुलाकात थी। उसके बाद वे इलाहाबाद आ गए रहने। तब मैं वहां यदा-कदा उनसे मिलने वहां जाया करता था।

वाम पंथ से आप कैसे जुड़े?

बनारस कांग्रेस का तो गढ़ था ही। कांग्रेस के कमलानंद त्रिपाठी थे, सोशलिस्ट पार्टी के संपूर्णानंद थे, काशी विद्यापीठ में नरेन्द्रनाथ जी थे। कम्युनिस्ट पार्टी भी बहुत मजबूत थी। वहां से रूस्तम सैटीन थे। उन्हीं दिनों मैं कम्युनिस्ट पार्टी से जुड़ा। हमलोगों का मुख्य केंद्र होता था गोदौलिया चौराहा।

बनारस और काशी हिंदू विश्वविद्यालय के बारे में कुछ बताएं?

इंटर करने के बाद 1947 में मैंने काशी हिंदू विश्वविद्यालय में बीए में दाखिला ले लिया था और हॉस्टल में रहता था। उसका नाम महेंद्रवी लॉज था जो संकट मोचन मंदिर के पास था। पचास-साठ लड़के उन दिनों उस लॉज में रहा करते थे। मैं रोज पहले गंगा स्नान करता और उसके बाद संकट मोचन मंदिर जाता था। उन दिनों यह मेरा प्रतिदिन का रूटीन था। काशी हिंदू विश्वविद्यालय से ही 1951 में हिन्दी में एम.ए. किया। उसके बाद 1953 में जब काशी हिंदू विश्वविद्यालय में अस्थायी रूप में व्याख्याता के पद पर मेरी नियुक्ति तो मुझे हॉस्टल छोड़ना पड़ा। और मैं लोलार्क कुंड के पास ही एक किराये के मकान में रहने लगा। वहां मैं अपनी मां और भाइयों के साथ रहा करता था। उन दिनों साहित्यकारों में

शंभुनाथ सिंह और त्रिलोचन शास्त्री विद्वान व्यक्ति थे लेकिन उनके पास कोई डिग्री नहीं थी। मैं इन दोनों से काफी मिलता-जुलता था और साहित्य की चर्चा किया करता था। दोनों आस-पास ही रहा करते थे। एक बार त्रिलोचन जी से गंगा तैर कर पार करने की बात पर मेरी ठन गई। वे कहते थे कि मैं गंगा तैर कर पार कर लेता हूं। बात को बढ़ा-चढ़ा कर कहने की उनकी आदत थी। वो रोज-रोज कहा करते थे इसलिए एक दिन मैंने भी ठान लिया कि चलो गंगा के उस पार। एक बार तैरकर मैं गया रेती पर और वहां थोड़ी देर रूकने के बाद मैंने तो किसी तरह गंगा पार कर लिया लेकिन त्रिलोचन जी बहाव में बहुत दूर तक चले गए। उस दिन पता चला कि त्रिलोचन जी ने कभी तैर कर गंगा पार नहीं किया। हांकने की उनकी आदत थी। लेकिन मैंने उसी दिन कान पकड़ कसम खाई कि आज के बाद कभी ऐसा काम नहीं करूंगा।

आचार्य द्विवेद्वी से आपकी मुलाकात कैसे हुई?

काशी हिंदू विश्वविद्यालय में आपकी नियुक्ति कैसे हुई? सन् 1950-51 में गुरुजी (आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी) से मेरी मुलाकात काशी हिंदू विश्वविद्यालय में ही हुई। एमए करने के बाद वहीं एक दिन उन्होंने कहा कि विश्वविद्यालय में पंचवर्षीय योजनाएं शुरू हो रही हैं। तुम अपने यहां से पंचवर्षीय योजना भेजो। जब योजना मंजूर हो गया तो वहां दो पद अस्थायी रूप में सृजित हुई। लेकिन इस नियुक्ति के लिए भी बाजाब्ता साक्षात्कार हुए थे। उसी पंचवर्षीय योजना के तहत पंडितजी ने एक पद पर मुझे नियुक्त किया और दूसरे पद पर रामदरश मिश्र को। यह नियुक्ति चूंकि पंचवर्षीय योजना के तहत थी इसलिए यह नियुक्ति अस्थायी ही मानी गई। बहरहाल छह साल पढ़ाने के बाद विश्वविद्यालय से मेरी छुट्टी हो गई।

आपने सीपीआई से चुनाव भी लड़ा था?

सन् 1959 के लोकसभा उप-चुनाव में चकिया चन्दौली से मैं भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी का उम्मीदवार था। लेकिन मैं चुनाव हार गया।

यह सीट थी राममनोहर लोहिया की। जब उपचुनाव में उन्होंने लड़ने से मना कर दिया तो सोशलिस्ट पार्टी ने मेरी जाति(राजपूत) के ही उम्मीदवार को खड़ा कर दिया। वहां मेरी जाति बिरादरी के बहुत लोग थे। उप-चुनाव में असफलता के साथ-साथ मैं विश्वविद्यालय से भी मुक्त हो गया।

चुनाव में असफलता और नौकरी खोने के बाद आपने क्या किया?

चुनाव हारने और नौकरी जाने के बाद थोड़े दिनों तक : मैं 1959-60 में सागर विश्वविद्यालय (म.प्र.) के हिन्दी विभाग में असिस्टेंट प्रोफेसर रहा। उसके बाद मैं फिर बनारस लौटा और 1960 से 1965 तक बनारस में रहकर ही स्वतंत्र लेखन कार्य करता रहा। फिर बनारस में मेरे लिए कुछ खास नहीं था इसलिए मैं दिल्ली आ गया। चूकि मैं पार्टी के टिकट पर चुनाव लड़ा था तो पार्टी ने दिल्ली से एक पत्रिका निकालने का फैसला किया और उसे निकालने की जिम्मेदारी मुझे दी गई। उन दिनों मैं 'जनयुग' पत्रिका निकाला करता था। उन दिनों राजकमल में भारी परिवर्तन हुए थे। श्रीमती शीला संधू राजकमल की मैनेजिंग डायरेक्टर हो गईं। लेकिन शीला संधू हिंदी नहीं जानती थी इसलिए लेखक अपनी किताब वापस लेने लगे थे। तो उन्होंने कम्युनिस्ट पार्टी के श्रीपाद अमृत डांगे से कहा कि मुझे एक पार्ट टाइम व्यक्ति चाहिए जो हिंदी जानता हो। पार्टी का काम तो मैं करता ही था इसलिए पार्टी ने मुझे वहां भेज दिया क्योंकि वहां से मुझे इसके बदले एक हजार रुपए मिलने वाले थे। मैं वहां साहित्य सलाहकार के रूप में कार्य करने लगा। मैं भी घूम- । घूम कर साहित्यकारों से मिलकर यह बताने लगा कि : आप अपनी पुस्तक वापस न लें। राजकमल प्रकाशन : एक आलोचना पत्रिका भी निकालती थी। शीला संधू । ने मुझे आलोचना पत्रिका के संपादन का दायित्व भी । सौंपा। उन दिनों मैं मॉडल टाउन में रहता था। दिल्ली : विश्वविद्यालय में पढ़ाने वाले बहुत से लोग उन दिनों । मॉडल टाउन में ही रहते थे। पहले विश्वनाथ त्रिपाठी के यहां रहा, बाद में अलग मकान लेकर रहने लगा। उन

दिनों वह साहित्यकारों का 'हब' था। बाद में राजकमल प्रकाशन ने मुझे आलोचना का संपादक तो रहने दिया लेकिन साहित्य सलाहकार के पद से हटा दिया। लेकिन सिर्फ आलोचना के संपादकी से काम नहीं चलने वाला था। इसलिए मैं तिमारपुर के सस्ते किराये के मकान में रहने लगा। उन दिनों मेरे मित्र आईपीएस मार्कंडेय सिंह जो बाद में चंद्रशेखर के जमाने में दिल्ली के लेफ्टिनेंट गवर्नर हुए वे क्लास फेलो थे, यूपी कॉलेज के दिनों में। वे भी दिल्ली में ही थे उनसे भी मिलना-जुलना हमेशा होता था।

जोधपुर विश्वविद्यालय जाना कैसे हुआ?

बालकृष्ण राव आगरा यूनिवर्सिटी के वाइस चांसलर थे। उन्होंने मुझे के.एम. मुंशी इंस्टीट्यूट का डायरेक्टर का पद ऑफर किया। मैं के.एम. इंस्टीट्यूट में ही था कि मुझे एक दिन अचानक एक टेलीग्राम मिला जोधपुर से। वह तार जोधपुर विश्वविद्यालय से था जिसमें मुझे हिंदी विभाग के विभागाध्यक्ष के रूप में बुलाया गया। मैंने यह तार राव साहब को दिखाया तो उन्होंने कहा कि मैं तुम्हें रोकूगा तो नहीं क्योंकि यह पोस्ट सिर्फ पांच वर्ष के लिए है और वह पोस्ट स्थायी है लेकिन मैं तुमसे एक महीने का वेतन वापस लूंगा। खैर मेरे रहते रामविलास जी ने वहां डायरेक्टर के पद पर ज्वाइन किया और मैंने एक महीने तक आगरा से दिल्ली अप-डाउन किया। एक महीने पूरे होने पर मैंने जोधपुर विश्वविद्यालय में ज्वाइन किया। वहां वाइस चांसलर वी.वी. जॉन थे। वहां मैंने नये सिरे से पाठ्यक्रम बनाया।

जे. एन. यू. कब और कैसे आए?

1974 में मुझे जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय के उप-कुलपति नाग साहब का नियुक्ति पत्र मिला। उन्होंने मुझे भारतीय भाषा केंद्र के अध्यक्ष के रूप में जेएनयू बुलाया था, और मैं गर्मियों की छुट्टी से पहले ही आ गया लेकिन ज्वाइन मैंने जुलाई में किया। उन्हीं दिनों पंडितजी के बाद साहित्य अकेडमी के हिंदी समिति का अध्यक्ष मुझे बनाया गया।

संघ लोक सेवा आयोग में हिंदी के लिए अपनी भूमिका पर प्रकाश डालें।

उन दिनों संघ लोक सेवा आयोग के अध्यक्ष थे ए.आर. किदवई (अखलाक उर-रहमान किदवई। एस.आर. किदवई (सिद्दीकुर रहमान किदवई) हमारे साथ जेएनयू में उर्दू पढ़ाते थे। हो सकता है ए.आर. किदवई को उन्होंने मेरे बारे में बताया होगा। एक दिन ए.आर. किदवई साहब का फोन आया कि आओ मुझसे मिलो। मैं मिलने गया तो उन्होंने कहा कि हिंदी देश की राष्ट्रभाषा है और देश के सिविल सेवा के अधिकारी हिंदी न जानें यह ठीक नहीं, इसलिए मैं सिविल सर्विस की परीक्षा में हिंदी इंट्रोड्यूस करना चाहता हूं। तुम्हारी क्या राय है तो मैंने कहा कि स्वागतयोग्य कदम है। बताइए इसमें मुझे क्या करना है। उन्होंने कहा कि संघ लोक सेवा आयोग की परीक्षा में हिंदी को इंट्रोड्यूस करना है इसलिए पाठ्यक्रम बनाओ। मैंने कहा कि एक तीन या पांच व्यक्तियों की कमिटि बनानी पड़ेगी तो उन्होंने कहा कि तुम नाम बताओ। मैंने दो नाम और बताए और वे राजी हो गए और कहा कि तुम्हारे लिए यहां से गाड़ी जाया करेगी और उन दोनों लोगों को आने-जाने का खर्च उन्हें मिल जाया करेगा। फिर हमलोगों ने मिलकर संघ लोक सेवा आयोग के हिंदी का सिलेबस तैयार किया।

सिलेबस के बाद मैंने संघ लोक सेवा आयोग की परीक्षा की कॉपी जांचने का भी काम किया। बाद में उन्होंने मुझे इंटरव्यू बोर्ड में भी रखा। क्योंकि उससे पहले हिंदी में साक्षात्कार नहीं लिया जाता था। इसका श्रेय ए.आर. किदवई को जाता है। संघ लोक सेवा आयोग के बाद ए.आर. किदवई राज्यपाल बनकर बिहार गए। तो फिर बिहार भी उन्होंने मुझे बुलाया और कहा कि कॉलेजों में व्याख्याता के पद खाली पड़े हैं, मैं उन्हें जल्द से जल्द भरना चाहता हूं। तुम हवाई जहाज से आओ और राज भवन में ठहरोगे और मेरी गाड़ी तुम्हें राजभवन से बिहार लोक सेवा आयोग लेकर जाएगी। और तुम्हारे खाने-पीने की भी व्यवस्था राजभवन

में ही होगी। तुम यहां किसी बाहरी व्यक्ति से नहीं मिलोगे क्योंकि बिहार बहुत ही बदनाम राज्य है। अगर यहां तुम्हारी बदनामी होगी तो मेरी भी बदनामी होगी। उसके बाद बिहार में अब तक कॉलेजों में कोई नियुक्ति नहीं हुई है। ये ए.आर. किदवई के साथ यह मेरा अनुभव है।

सुनते हैं कि आपातकाल के दौरान ही एक कार्यक्रम में प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी से आपके संबंधों की शुरूआत हुई थी। हां आपातकाल के दौरान ही उनसे मेरी पहली मुलाकात हुई थी।

उस कार्यक्रम में श्रीमती इंदिरा गांधी बतौर मुख्य अतिथि आई थीं और मैं मुख्य वक्ता था। मैंने इंदिरा गांधी को संबोधित नहीं किया। चूंकि उन्होंने देश में आपातकाल लगाया था इसलिए वह मेरे गले नहीं उतरती थीं। मेरा संबोधन इस प्रकार था-'आदरणीय बच्चन जी और मित्रों।' हाल ही में ज्ञानपीठ का एक समारोह था। मैं प्रवर समिति का अध्यक्ष था उसके नाते मुझे स्वागत करना था। इस कार्यक्रम के मुख्य अतिथि प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी थे। सारा भाषण लिखा हुआ था। लेकिन मैंने जो संबोधन किया वह इस प्रकार था-'बंधुवर नेमाडे, श्री मोदी, आदरणीय मंच और सभागार में उपस्थित सज्जनों।' मैंने माननीय या आदरणीय आदि संबोधन श्री मोदी के लिए भी नहीं लगाया।

अटल जी के बारे में कोई संस्मरण हैं तो सुनाएं।

ग्वालियर में अटलजी खूब कविता सुनाया करते थे। वहां शिवमंगल सिंह सुमन मेरे बड़े भाई जैसे ही थे। वे भी बहुत अच्छी कविता पढ़ा करते थे। जब वे गवर्नमेंट कॉलेज के प्रिंसिपल हुए तो ग्वालियर कई बार उन्होंने मुझे बुलाया था। ग्वालियर में एक बार कवि सम्मेलन में गया तो वहां अटलजी को कविता सुनाते सुना- 'हार नहीं मानूंगा, रार नहीं ठानूंगा, काल के कपाल पर लिखता हूं, मिटाता हूं।' वाजपेयीजी को पहले से जानता था और उन्हें कई बार कवि सम्मेलनों में कविता पढ़ते सुना था। जब अटलजी देश के प्रधानमंत्री थे तो गुजरात दंगों के बाद जावेद अख्तर के साथ उनसे मिलकर मेमोरेंडम देने गया। इस प्रतिनिधि

मंडल में मुझे हिंदू प्रतिनिधि बनाकर लाया गया था। वाजपेयी जी ने शाम पांच बजे का टाइम मिलने के लिए दिया था। हमलोगों पांच मिनट देर से पहुंचे। जैसे ही पहुंचे तो उन्होंने कहा कि कामरेड लोग भी टाइम के पंक्चुअल नहीं होते! आप लोग पांच मिनट लेट हैं। आपलोग प्रधानमंत्री से भी इंतजार करवाते हैं। हम लोग तो मेमोरेंडम लिखकर ले गए थे लेकिन वाजपेयी जी ने पूछा कि कहिए क्या कहना है? जब जावेद ने लिखा हुआ मेमोरेंडम आगे बढ़ाया तो उन्होंने कहा कि यह तो हम देख लेंगे, आप लोगों को कहना क्या है? तो जावेद अख्तर ने मेरी तरफ इशारा किया। तब मैंने कहा कि "आपने गुजरात वाली घटना पर कहा था कि यह घटना हमारे माथे पर कलंक है। आपके माथे पर चंदन का टीका ही शोभा देता है, कलंक का टीका नहीं। आप उसे पोंछ क्यों नहीं देते?' वाजपेयी जी ने छूटते ही कहा कि पोंछ तो दूँ पर उसके बाद सिर रहेगा कि नहीं! मैंने हाथ जोड़ते हुए कहा कि देश का प्रधानमंत्री अगर ऐसा सोचता है तो मुझे कुछ नहीं कहना है। यह घटना मैं कभी भूल नहीं सकता।

चंद्रशेखर और विश्वनाथ प्रताप सिंह से भी आपकी मित्रता रही है इन दोनों के स्वभाव में क्या समानता और भिन्नता थी?

विश्वनाथ प्रताप सिंह को तो मैं अपने उदय प्रताप कॉलेज के दिनों से जानता हूं। वे भी उसी कालेज में मेरे साथ पढ़ते थे। उन दिनों विश्वनाथ प्रताप सिंह की जान को खतरा था इसलिए हमेशा एक बंदूकधारी उनके साथ रहता था। जब वे इलाहाबाद रहने लगे तब भी मैं उनके घर आता-जाता था। यहां जब वे सिर्फ सांसद थे तब भी मैं उनके बुलाने पर उनके घर जाता था। विश्वनाथ प्रताप सिंह जब प्रधानमंत्री बने तब भी मुझे दिल्ली अपने निवास पर बुलाते थे और खाना खिलाते थे। इस तरह कहें तो विश्वनाथ प्रताप सिंह से मेरा बहुत ही घरेलू संबंध था। वहीं चंद्रशेखर से हमारा संबंध मार्कंडेय सिंह की वजह से था। चंद्रशेखर अच्छे राजनेता थे तो विश्वनाथ प्रताप सिंह अच्छे कवि भी थे। वे अच्छी

कविता लिखते थे। इनकी कविताओं को मैंने चुना भी था। जब वे प्रधानमंत्री थे तो उन्होंने मुझे कविता संग्रह की भूमिका लिखने को कहा तो मैंने कहा कि लोग कहेंगे कि आप प्रधानमंत्री होकर कविता छपवा रहे हैं, इसलिए मैं भूमिका नहीं लिखंगा। अगर आप प्रधानमंत्री नहीं होते तो मैं आपकी कविताओं की भूमिका लिख देता। वे अच्छे कवि थे। हाइकूनमा छोटी-छोटी कविताएं लिखा करते थे। विश्वनाथ प्रताप सिंह बहुत अच्छे पेंटर भी थे। चंद्रशेखर के प्रधानमंत्री नहीं रहने पर मैंने उनकी पुस्तक चंद्रशेखर की जेल डायरी की भूमिका लिखी है। मार्कंडेय सिंह की वजह से चंद्रशेखर के घर पर बराबर जाया करता था।

गांधीजी के बारे में आपके शुरूआती विचार क्या थे?

बचपन में मैं कामता प्रसाद विद्यार्थी जी के यहां जाया करता था। उनके यहां सस्ता साहित्य मंडल से छपी पुस्तकें आया करती थीं। वहीं मैंने गांधीजी के 'सत्य के प्रयोग' पुस्तक पढ़ी। 'हिंद स्वराज' आदि किताबें भी मैंने वहीं पढ़ीं। सच कहूं तो सबसे पहले मैं गांधीजी से ही प्रभावित हुआ।

स्वतंत्रतापूर्व किस राजनीतिक दल से आपकी वैचारिक समानता थी?

कांग्रेस से मेरी वैचारिक समानता रही थी। उन दिनों बनारस से हंस पत्रिका निकलती थी और शिवदान सिंह चौहान उसके संपादक थे। जब मैं प्रगतिशील लेखक संघ से जुड़ा तो मार्क्सवाद की तरफ झुकाव हुआ। दूसरे शब्दों में कहूं तो प्रगतिशील लेखक संघ के नाते मैं मार्क्सवादी था। कई बंगाली लेखकों से मित्रता हुई जो कम्युनिस्ट पार्टी से जुड़े थे। उन दिनों बनारस में कम्युनिस्ट पार्टी मजबूत थी। रूस्तम सैटिन और पीसी जोशी मुझे कम्युनिस्ट पार्टी के और नजदीक लाए। कम्युनिस्ट पार्टी ने भारत विभाजन के दिनों एक बुकलेट छापी थी-'गांधी जिन्ना फिर मिलें'।

कम्युनिस्ट पार्टी विभाजन नहीं चाहती थी। उस समय एक पी.सी. जोशी की लाइन थी और दूसरी वी.पी. रणदिवे की लाइन थी। पी.सी. जोशी नेहरूवादी थी इसलिए बाद में उनको हटा भी दिया गया। वी.पी. रणदिवे एक्सट्रीम लेफ्ट लाइन के थे। मैं स्वभावतः पी. सी. जोशी और रूस्तम सैटिन वाली लाइन का ही था। मैं इसी लाइन को अंत तक मानता रहा हूं, मैं एक्सट्रीम लेफ्ट का कभी नहीं रहा।

आपने सीपीआई से लोकसभा का उप-चुनाव भी लड़ा था फिर पार्टी की सक्रिय सदस्यता कब छोड़ी?

मैंने पार्टी से कभी इस्तीफा तो दिया नहीं इसलिए पार्टी छोड़ने की बात नहीं कही जा सकती। हां जब कम्युनिस्ट पार्टी ने आपातकाल में इंदिरा गांधी का समर्थन किया तो कम्युनिस्ट पार्टी से मेरा मोह भंग हुआ और मैंने कम्युनिस्ट पार्टी का मेंबरशिप रिन्य नहीं कराया।

भारत के बौद्धिक वर्ग में आज भी वाम पंथ का मजबूत आधार है इसके बावजूद वाम पंथ सिमट रहा है ऐसा क्यों?

कारण तो कुछ लोग यह कहेंगे कि सोवियत संघ जो समाजवाद का केंद्र हुआ करता था, जहां सबसे पहले-पहल वाम पंथ स्थापित हुआ, जब वहीं समाजवाद खत्म हो गया तो और जगह रहकर क्या करेगा! यानी जब मक्का में ही इस्लाम खत्म हो जाएगा तो दूसरी जगह पर उसके रहने का कोई मतलब नहीं रह जाता। अगर मार्क्स के नियम को ही मानें तो उसके अपने आंतरिक अंतर्विरोध ही समाजवाद के खात्मे का कारण बना है। मार्क्स के अनुसार, जब पूंजीवाद अपने अंतर्विरोधों के कारण खत्म हो सकता है तो वह समाजवाद पर भी लागू होगा। इसलिए अपने अंतर्विरोधों के कारण समाजवाद रूस, चीन, क्यूबा आदि देशों से खत्म हो गया। नियम या सिद्धांत है तो वह हर जगह समान रूप में लागू होगा। लेकिन इससे मार्क्स अप्रासंगिक नहीं होते।

समाजवाद का अंतर्विरोध क्या है?

समाजवाद का अंतर्विरोध है वर्गहीन समाज। सपना था साम्यवाद का, लेकिन समाज में एक शासक वर्ग और दूसरा शासित वर्ग पैदा हो गया। डिक्टेटरशीप के खात्मे के लिए समाजवाद पहला स्टेज है। लेकिन समाज में आज भी डिक्टेटरशीप विद्यमान है। यही समाजवाद का अंतर्विरोध है।

आज आप रेणु को किस स्थान पर रखेंगे?

कुछ लोग रेणु को प्रेमचंद से बड़ा मानते थे। लेकिन रेणु ने भले ही प्रेमचंद से कम लिखा हो पर रेणु में गहराई बहुत अधिक है। मेरा एक लेख है 'व्यापकता और गहराई' । लोग उस समय भी कहा करते थे कि प्रेमचंद में व्यापकता तो है लेकिन गहराई नहीं है। उसके बरक्स जैनेन्द्र और अज्ञेय में गहराई बहुत अधिक दिखाई पड़ती है जबकि इनमें व्यापकता नहीं है। व्यापकता और गहराई में डाइलेक्टिकल संबंध है। कुंए और तालाब की तुलना करें तो तालाब में व्यापकता होगी लेकिन कुंए में गहराई होगी। दूसरी तरफ अगर तालाब की व्यापकता कम होगी तो उसकी गहराई भी कम हो जाएगी। लेकिन कुंए में गहराई होती है लेकिन व्यापकता नहीं। मसलन- गीता। गीता भले ही बहुत पतली पुस्तक है लेकिन गीता के दर्शन में जो गहराई है वह अन्यत्र दुर्लभ है। इसमें कथा तो कोई है नहीं। इसी तरह 'उसने कहा था' एक छोटी कहानी है, उसमें व्यापक जीवन नहीं है लेकिन गहराई है। प्रेमचंद के 'गोदान' और रेणु के 'मैला आंचल' की तुलना करें तो मैला आंचल में गोदान से व्यापकता कम है लेकिन गहराई अधिक है। हालांकि कभी-कभी यह होता है कि व्यापकता कम होने के साथ-साथ गहराई भी कम होती है। लेकिन यह बात तालाब के बारे में तो सही है लेकिन कुंए के बारे में सही नहीं है। कई मीडिया वालों के पास सूचनाएं तो होती है लेकिन उनमें राजनीतिक समझ नहीं होती। अज्ञेय कवि हैं। 'शेखर एक जीवनी' शायद उनकी आत्मकथा है। लेकिन 'शेखर' के बरक्स 'बाणभट्ट की आत्मकथा' टिकेगी। उसी तरह जैनेन्द्र ने जीवन का बहुत बड़ा फलक नहीं लिया है

लेकिन जैनेन्द्र 'त्याग-पत्र' की वजह से टिकेंगे। गहराई के मामले में भी समुद्र समुद्र ही रहेगा। जैसे 'महाभारत' में कई गीताएं हैं। महाभारत तो महाभारत ही है। जैसे कि हिंद महासागर। हिंद महासागर में गहराई भी है और व्यापकता भी है। महाभारत के सामने लोग बाल्मिकी रामायण को दूसरे नंबर पर ही रखते हैं। यद्यपि कवित्व और काव्य बाल्मिकी रामायण में ज्यादा है जो व्यास के महाभारत में नहीं है। इस लिहाज से रामायण का जो महत्व है वह महाभारत का नहीं है। लोगों ने महाभारत को इतिहास कहा है और रामायण को काव्य।

मुस्लिम समुदाय की अशिक्षा, बदहाली और गरीबी के क्या कारण है?

अगर इस्लाम, ईसाई और हिंदुत्व की तुलना करें तो दुनिया के पैमाने पर ईसाइयत का विस्तार बहुत अधिक है। उसकी तुलना में इस्लाम बहुत छोटा है। मेरी यह समझ है कि दुनिया की एक बड़ी आबादी ईसाई है, भोगोलिक स्तर पर हिंदुत्व का फैलाव कम है। वहीं इस्लामिक देश भोगोलिक दृष्टि से ज्यादा हैं। जहां तक मुस्लिम पिछड़ेपन की बात है तो इस्लाम की संकीर्णता के चलते ही इस्लाम का विकास नहीं हो पाया। उदाहरणस्वरूप – पांच वक्त की नमाज, मुहर्रम मनाओ, एक महीना रोजा रखो आदि। ये सब इस्लाम की संकीर्णताएं हैं जिसकी वजह से उसका विकास नहीं हुआ।

इस्लाम का इतिहास देखें तो यह सबसे कम समय का है। हम अगर वेद को मानें तो सबसे पुराना तो हिंदुत्व ही है। उसके बाद ईसाई धर्म का इतिहास है। हिदुत्व के बहुत सारे तत्व ईसाई धर्म ने लिया है। किसी धर्म विस्तार इस बात पर निर्भर है कि वह कितना उदार या संकीर्ण है। ईसाइयत इस्लाम की तुलना में ज्यादा उदार है इसलिए इसका विकास ज्यादा हो रहा है। इस मामले में हिंदुत्व सबसे ज्यादा उदार है क्योंकि उसके पास कोई एक किताब नहीं है। न एक ईश्वर है, न एक धर्मग्रंथ। इसलिए अंग्रेजों ने हिंदुस्तान को बदलने की कोशिश बहुत की

पर हिंदुस्तान ईसाई मुल्क नहीं बना। चर्च खोले, बहुत कुछ किया, लेकिन कुछ आदिवासियों को जरूर पैसा का प्रलोभन देकर ईसाई बनाया।

इससे पहले इस्लाम आया, धर्म परिवर्तन भी हुआ लेकिन हिंदुस्तान को इस्लाम में बदल नहीं सके। जो धारण किया जा सके वह धर्म है। हिंदू जन्म से ही होता है, बनता नहीं है। यह अकेला धर्म है जिसमें धर्मांतरण नहीं है। इसलिए 'मनुस्मृति' में इसे 'मानव धर्म' कहा गया है। हिंदू धर्म में जो खुलापन है उसी के चलते बहुत से ईसाइयों और मुस्लिमों ने हिंदू धर्म स्वीकार किया। खासकर सूफियों ने हिंदू धर्म से बहुत कुछ लिया है।

पिछले कुछ सालों में दलितों का विकास हुआ है लेकिन दलित नेतृत्व हाशिए पर जा रहा है।

इस पर अंबेडकर ने बहुत विचार किया है। खास चीज है 'सत्ता की हैरारकी' । अंबेडकर समझते थे इस हैरारकी को। इन लोगों ने एक शब्द चलाया 'दलित' । जाति व्यवस्थ हिंदू समाज की ताकत और बुराई दोनों है। यह जाति इतनी दूर तक शामिल है कि यह दलितों में भी है। जैसे दलितों की एक जाति महार, अपने को चमार से ऊपर समझता है। बाबू जगजीवन राम चमार थे और अंबेडकर महार। इसलिए राजनीति में भी एक वर्ग नहीं बन पाया। वैसे हमारे यहां आरंभ में वर्ण व्यवस्था थी, जाति व्यवस्था नहीं थी।

स्त्री विमर्श की तुलना में दलित विमर्श ज्यादा प्रचारित हो रहा है लेकिन दलित लेखन से ज्यादा रचनात्मक स्त्री लेखन प्रतीत हो रहा है।

जाहिर है स्त्रियों की तादाद ज्यादा है। स्त्री कहने का मतलब है आधी दुनिया और जब आप दलित कहते हैं तो उस मतलब दस फीसदी के लगभग है। दलित विमर्श मूलतः राजनीतिक है लेकिन स्त्री विमर्श

ज्यादा मानवीय है। इसलिए स्त्री लेखन ज्यादा रचनात्मक और वैविध्यपूर्ण है।

क्या स्त्री पराधीनता का कारण जैविक है?

स्त्री पराधीनता का कारण मैं जैविक नहीं मानता। मेरे पास आंकड़े नहीं है लेकिन दुनिया में लगभग बराबर बराबर स्त्री और पुरुष हैं। जो काम पुरुष कर सकता है वह काम स्त्री भी कर सकती है। हमारा समाज पुरुष प्रधान है लेकिन हमारे यहां ऐसे भी दौर रहे हैं जब स्त्री प्रधान रही है। हमारे यहां कारू कामाख्या को 'स्त्री देश' ही कहा जाता है। देश में ऐसी जनजातियां भी हैं जहां स्त्री की प्रधानता है। इसलिए हमारे यहां शक्ति की पूजा होती है और कहा जाता है कि बिना शक्ति के शिव 'शव' हैं। शिव में 'इ' शक्ति है, उसे हटा दें तो शिव 'शव' हो जाएगा।

साहित्य में प्रगतिशील साहित्य हावी रहा है लेकिन बदले राजनीतिक माहौल में दक्षिण पंथी साहित्य की प्रवृत्ति उभरने लगी है।

मैं एक ही सिद्धांत मानता हूं। साहित्य में 'सह' शब्द है। साहित्य में 'शब्द' भी सुंदर हो और 'अर्थ' भी सुंदर हो तो साहित्य होता है। 'सह' भाव साहित्य का धर्म है। इसलिए वही साहित्य श्रेष्ठ होगा जो साहित्य धर्म का पालन करेगा। मतलब जाति में समानता, स्त्री-पुरुष में समानता, धनी-गरीब में समानता। इसे ही साहित्य का सह धर्म या 'सह-अस्तित्व' कहते हैं। 'शांतिपूण सह-अस्तित्व' साहित्य का महत्वपूर्ण धर्म हैं। इसमें विरोधी लोग भी इस शांतिपूण सह अस्तित्व का पालन करें। 'जियो और जीने दो' का मतलब है कि हम जिससे सहमत नहीं हैं उसे भी जीने दें। साहित्य का एक ही सिद्धांत है- 'शांतिपूण सह अस्तित्व'। इसे मानव समाज का धर्म बनाना चाहिए।

आलोचना में आप शीर्षस्थ मान लिए गए हैं आप से संवाद करने वाला कोई नहीं है। इस बौद्धिक सन्नाटे का अपकी साहित्यिक सक्रियता पर क्या असर पड़ रहा है?

मुझे अपने बारे में कोई भ्रम नहीं है। मैं इस मुगालते में नहीं हूं। आलोचना के क्षेत्र में बहुत लोग हैं और अच्छा काम कर रहे हैं। मैं किसी को अपना प्रतिद्वंद्वी नहीं मानता। इसलिए कि 'संतन को कहां सीकरी सो काम, आवत-जात पनहिया टूटी बिसयो गर हरि नाम' । जो मुझे दिखाई पड़ता है वही कहता हूं, मुंहदेखी नहीं कहता।

ऐसा लगता है कि जिस तरह 'बाणभट्ट की आत्मकथा' आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी की कथा है, क्या उसी तरह 'दूसरी परंपरा की खोज' के वास्तविक नायक नामवर सिंह ही नही हैं?

पुस्तक लिखते समय मुझे इसका अहसास नहीं हुआ। इसके बाद भी नहीं हुआ। मैं यह विनम्रता के कारण नहीं कह रहा हूं। मैं अपनी सीमाएं जानता हूं। आप उन पुस्तकों का नाम बताएं जो कागज पर नहीं उतर सकी?

"हजारों ख्वाहिशें ऐसी कि हर ख्वाहिश पै दम निकले।
बहुत निकले मेरे अरमान लेकिन फिर भी कम निकले।"

यदि अवसर हो तो किस विषय पर लिखना चाहेंगे?

मैं बोलकर लिखाता नहीं, मैंने जो भी लिखा है अपने हाथ से लिखा है। और अब अपनी ऐसी स्थिति नहीं है कि कलम लेकर कुछ लिख सकूँ। इसलिए मैंने यह इरादा ही छोड़ दिया।

"इरादे बांधता हूं, छोड़ता हूं, तोड़ देता हूं,
कहीं ऐसा न हो जाए, कहीं वैसा न हो जाए।"

कुछ बड़ा पाने के लिए कुछ बड़ा खोना पड़ता है। आपने बड़ा क्या खोया है?

मैं बड़ा और छोटा के रूप में नहीं सोचता, और न ही इन दोनों छोरों से परे मैं अपने को मानता हूं। मेरी स्थिति इन चीजों से अलग है। न किसी से बड़ा होने की चाह है, न मैं अपने को किसी से छोटा समझता

हूं। मैं जो हूं और इतने दिनों में जो निमित्त होकर बना हं उससे मैं अलग नहीं हो सकता। मेरी नजर में सब बराबर हैं। मैं अब किसी होड़ में शामिल नहीं हूँ।

अगर आप अपने को आलोचना के मैदान से बाहर मान रहे हैं तो मैदान में किसे मानते हैं?

जो मैदान में आना चाहे, आलोचना का मैदान खुला है "उठा ले जो बढ़ाकर हाथ, पैमाना उसी का है।"

भारतीय काव्यशास्त्र चिंतन परंपरा में आप किसे श्रेष्ठ मानते हैं?

अभिनवगुप्त। वैसे बड़े तो आनन्दवर्द्धन हैं जिन्होंने ध्वनि की खोज की। लेकिन 'यथोत्तरं मुनिनाम प्रमाण्यम्' यानी एक मुनि के बाद जो दूसरा मुनि आता है वह श्रेष्ठ होता है। अगर आनंदवर्द्धन न हुए होते तो अभिनवगुप्त न होते। आधार तो आनंदवर्द्धन का ही है लेकिन जो पांडित्य कश्मीरी शैववाद का है वह अन्यत्र दुर्लभ है। अभिनवगुप्त ने ध्वनि को जिस रूप में प्रतिष्ठित किया वैसा पांडित्य किसी और में नहीं दिखता।

भारतीय दर्शन की परंपरा में आप किसे श्रेष्ट मानते हैं?

निस्संदेह शंकराचार्य। भारतीय दर्शन में शंकर जिस ऊंचाई पर पहुंचे वहां तक कोई नहीं पहुंच पाया। अद्वैतवाद जैसा दर्शन किसी और का नहीं है। इसलिए शंकराचार्य से श्रेष्ठ कोई हो ही नहीं सकता।

आज लोकप्रिय साहित्य को आलोचक निम्न श्रेणी या लुगदी साहित्य कह रहे हैं, जबकि एक जमाने में बाब देवकीनंदन खत्री को पढ़ने के लिए लोग हिंदी सीखते थे। इसे आप कैसे देखते हैं?

यह आचार्य रामचंद्र शुक्ल की टिप्पणी है। आचार्य शुक्ल ने यह टिप्पणी जिस दौर के लिए की है उस दौर के लिए इस टिप्पणी को सही मान सकते हैं। अंग्रेजी में दो शब्द हैं-'पॉपुलर' और 'पॉपुलिस्ट' । 'पॉपुलिस्ट' वह है जो वाह-वाही ले उड़े और 'पॉपुलर' वह है जो लोकप्रिय हो। प्रेमचंद पॉपुलर हैं। पॉपुलिस्ट- बाजारू है जबकि पॉपुलर लोकप्रिय।

मेरे विचार से साहित्य में पॉपुलर होना ठीक है लेकिन पॉपुलिस्ट होना ठीक नहीं।

आज बाजार हमारी जिंदगी पर हावी है, बाजार हमें संचालित करने लगा है। ऐसे दौर में क्या साहित्य भी बाजारू होने लगा है?

अभी तक तो नहीं हुआ है। लोगों में यह विवेक बचा हुआ है। बाजारू शब्द बहुत ही खराब है। जैसे बाजारू औरत ठीक नहीं होती वैसे ही बाजारू लोकप्रियता ठीक नहीं। बाजारू से मतलब सस्ती लोकप्रियता है। सस्ती लोकप्रियता बेहद खतरनाक है।

(साभार- यथावत, अंक- जुलाई 2015)

लोक-विनोद

जुत्ती हाथां म्हें ठार्या सूं

एक छिकमा एं कंजूस दुकानदार था। उसकी देखमदेख छोरा उसतै भी घणा मंजी होग्या। एक दिन दुकानदार सांझ नै आण की क्है कै शहर चला गया। दिन छिप गया। बाब्बु नहीं आया तो छोरा दुकानदार करकै घरां चल्या गया। घरां जायां पाच्छै उसकै याद आई अक् बिजली चसदी ए रहग्यी। ओ बंद करण खात्तर उल्टा ए चल दिया। न्यून तै दुकानदार भी शहर में आन्दा होया सीधा ए दुकान पै पहोंच ग्या। देख्या तो बिजली चसण लागर्यी था। ओ भीतर बड़कै सामान जचाण लागग्या। उसने सोच्या बिजली का तो जुण सा खर्च होया सो होया। ईंब ओ छोरा आवैगा, उसकी जुत्ती धसैंगी, यू और नुक्सान भुगतना पड़ैगा। इतनै ए म्हैं बाहर तै आवाज आई - भीत्तर कूण सै ? बाब्बु नै बेटे की आवाज पिछाण ली अर बोल्या - रे तूं ईंब के लेण आया सै ? मैं बिजली बन्द करण आया सूं । या सुनकै दुकानदार बोल्या - रै बिजली नै तो छोड़ इन जुत्तियां की घिसाई का डण्ड कोण भरेगा? छोरा उसका भी किमे लाग्यै था- बोल्या-बाब्बु! घबरावै ना, जुत्ती हाथां म्हें ठार्या सूं।

वैक्सीन काम कैसे करती है?

□ डा. नवमीत नव

कभी आपने यह विचार किया है कि वैक्सीन काम कैसे करती है? एक पोस्ट में आपको बताया था कि वैक्सीन की खोज कैसे हुई थी और किसने की थी? इस पोस्ट में बात करेंगे कि वैक्सीन कैसे हमें बीमारियों से बचाती है?

आपने इम्युनिटी यानी हमारे शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता के बारे में तो सुना ही होगा। यह हमारे शरीर की रक्षा प्रणाली होती है जो हमें संक्रमण से बचाती है। इसके दो भाग होते हैं। पहली होती है इनेट इम्युनिटी यानि नैसर्गिक प्रतिरोधक क्षमता। यह जन्मजात होती है और हमारे शरीर की रक्षा की पहली पंक्ति का काम करती है। जब भी कोई बाहरी आक्रमण शरीर पर होता है तो उसका सबसे पहला सामना इसी से होता है। इसके बाद आती है अक्वायर्ड यानि अर्जित इम्युनिटी जिसे सेल मिडीएटेड इम्युनिटी भी कहते हैं। जैसा कि नाम से पता चलता है यह वह इम्युनिटी है जो हम अपनी जिंदगी के दौरान हासिल करते हैं। और यह हमारे शरीर में मौजूद कुछ खास सेल्स यानि कोशिकाओं से चालित होती है। ये कोशिकाएं होती हैं श्वेत रक्त कोशिकाएं यानि लिम्फोसाइट्स। ये दो तरह की होती हैं। टी सेल्स और बी सेल्स। टी सेल्स हमारी छाती में मौजूद एक ग्रंथि थाइमस में बनती हैं और बी सेल्स हमारी बोन मेरो यानि अस्थि मज्जा में। इनमें से टी सेल्स दो तरह की होती हैं। किलर यानि मारक टी सेल्स और हेल्पर यानि मददगार टी सेल्स। मददगार टी सेल्स

या तो इम्युन रिस्पॉन्स को रेगुलेट करती हैं या फिर मेमोरी यानि यादगार टी सेल्स में विकसित हो जाती हैं।

जैसा कि नाम से जाहिर है किलर टी सेल्स आक्रमक कीटाणुओं को मारने का काम करती हैं और मेमोरी टी सेल्स उन्हें याद रखने का। इसका मतलब यह हुआ कि एक बार कोई इन्फेक्शन हुआ तो शरीर की किलर टी सेल्स उससे लड़ कर उसे खत्म कर देती है और मेमोरी टी सेल उसके एंटीजन को याद रख लेती हैं। यहां एक चीज और जाननी जरूरी है। जब कोई बैक्टीरिया या वायरस शरीर पर हमला करता है तो हमारी इम्युनिटी उसके किसी घटक की पहचान करती है जो उस पर मौजूद कोई प्रोटीन, लिपिड या कार्बोहायड्रेट हो सकता है जिसे एंटीजन कहते हैं। हमारी बी सेल्स इनके साथ प्रतिक्रिया करने के लिए खास तरह के प्रोटीन का निर्माण करती हैं जिसे एंटीबॉडी कहते हैं। किसी भी खास एंटीजन के खिलाफ एक खास एंटीबॉडी का ही निर्माण होता है।

इन सब बातों का वैक्सीन से क्या संबंध है? संबंध ये है कि जब कोई रोगाणु शरीर पर हमला करता है तो हमारी बी सेल्स एंटीबॉडी बनाती हैं जो इनका खात्मा करना शुरू कर देती हैं। लेकिन इस रोगाणु के एंटीजन को पहचानने और उसके खिलाफ इम्यून रिस्पॉन्स देने के लिए शरीर को समय लगता है जोकि सामान्य बात है। समस्या तब आती है जब बीमारी बहुत घातक हो जैसे कि चेचक या फिर बच्चों में होने वाला खसरा जो मरीज को इतना समय ही नहीं देते कि इम्यून रिस्पॉन्स पैदा करके उन्हें खत्म कर दे। उससे पहले ही रोगी या तो अपंग हो जाता है या फिर उसकी मृत्यु हो जाती है।

तो अब वैक्सीन का क्या रोल है? वैक्सीन मरे हुए या कमजोर कर दिए गए एंटीजन होते हैं। ये शरीर में बीमारी पैदा नहीं कर सकते। लेकिन हमारे शरीर की इम्युनिटी इनको पहचान कर एंटीबॉडी जरूर बना लेती हैं। इसके साथ ही किलर टी सेल्स और मेमोरी टी सेल्स भी सक्रिय हो जाती हैं। इस कमजोर या मरे हुए एंटीजन को शरीर की इम्युनिटी खत्म

कर देती है और मेमोरी टी सेल्स इनको याद रख लेती हैं। अब अगर यही रोगाणु भविष्य में कभी शरीर पर हमला करता है तो मेमोरी टी सेल्स को इनकी याद रहती है। जैसे ही यह शरीर में पहुंचता है तो शरीर की इम्युनिटी इन्हें तुरंत पहचान कर इसके खिलाफ एकदम से इम्यून रिस्पॉन्स पैदा कर देता है और कोई भी नुकसान पहुंचाने से पहले इनको खत्म कर देता है।तो इस तरह से सम्बंधित वैक्सीन हमारे शरीर को उस रोग से बचा लेती है। अलग अलग रोगों के रोगाणुओं के खिलाफ वैक्सीन हमारे पास उपलब्ध हैं। कुछ वैक्सीन जीवनपर्यंत इम्युनिटी देती हैं जैसे कि खसरा। कुछ के खिलाफ बहुत कम जैसे इन्फ्लुएंजा के खिलाफ अक्सर 1 वर्ष की ही इम्युनिटी मिलती है।

डॉ. नवमीत नव. पानीपत, हरियाणा के एन.सी. मेडिकल कॉलेज में सहायक प्रोफेसर है

सुमित्रानंदन पंत की कविता

सुख-दुख

मैं नहीं चाहता चिर-सुख,
चाहता नहीं अविरत दुख,
सुख-दुख की आँख-मिचौनी
खोले जीवन अपना मुख।
सुख-दुख के मधुर मिलन से
यह जीवन हो परिपूरन,
फिर घन में ओझल हो शशि,
फिर शशि से ओझल हो घन।
जग पीड़ित है अति दुख से
जग पीड़ित रे अति सुख से,
मानव जग में बँट जावें
दुख सुख से औ' सुख-दुख से,
अविरत दुख है उत्पीड़न,
अविरत सुख भी उत्पीड़न;
दुख-सुख की निशा-दिवा में
सोता-जागता जग-जीवन।
यह साँझ-उषा का आँगन,
आलिंगन विरह-मिलन का,
चिर हास अश्रुमय आनन
रे इस मानव-जीवन का!

कर्मचंद केसर की ग़ज़ल

हरदम सुख की आस करणा ठीक नहीं।
देह् का सत्यानाश करणा ठीक नहीं।

बो कै नैं बबूल दिलां की धरती पै,
आम्बां की तलाश करणा ठीक नहीं।

खोस कै नैं खेल किताबां दे राक्खी,
बचपन नैं उदास करणा ठीक नहीं।

साधु संत साहूकार चै रहबर हो,
आँख मूँद बिसवास करणा ठीक नहीं।

हड़प लिए सैं पाह्ड़ समन्दर जंगळ तक,
कुदरत का न्यूँ नाश करणा ठीक नहीं।

देख्या भाळ्या बोल्या बरत्या ना हो जो,
उस बारै बकवास करणा ठीक नहीं।

करकै काम करी कमाई का 'केसर'
आपणे हात्थां नाश करणा ठीक नहीं।

राजकुमार जांगडा “राज" की रागनी

दिन दहाड़े म्हारी मेहनत पै इन ऊतां नै लूट मचाई रै
सब क्याहें का नाश करा इसी चढ़ रही सै करड़ाई रै

मस्टंडे आवैं हमने समझावें घणी बडी बडी बात करै
मुफ्त का खावें और गुर्रावे बिगाने धन पै हाथ धरै
माणस जात में पाड़ लगा रै न्यारे धर्म और जात करै
लेण के न्यारे देण के न्यारे रै यें न्यारे न्यारे बाट धरै
सब क्याहें में दोभान्त करैं काग्या नै रोळ मचाई रै
सब क्याहें का नाश.....

लोग भकाणां लूट के खाना यो ए ढंग अपणा राख्या
लठ बजवाणा फ़ायदा ठाणा सबकै रंग चढ़ा राख्या
बाबु दादा जोड़ के धरगे बेचण पै ध्यान लगा राख्या
भरे जोहड़ में सूखा काढ्य ईसा पंचायती बैठा राख्या
यू छड़ के देश बगा राख्या किसी रापट रोळ मचाई रै
सब क्याहें का नाश .....

दो का ले कें सौ का बेचय इसे ब्यौपारी पाळ लिए
ले के देंणा ना करके खाणा इसे ब्यौहारी पाळ लिए
आँख के आंधे गांठ के पूरे इसे खाँचे में ढाळ दिए
दिन धौळी नै रात बतावैं आड़े बिछा इसे जाळ दिए
चाहे सारी दुनियां जा गाळ दिए तार के शर्म बगाई रै
सब क्याहें का नाश .....

मुंड मुंडावे कोई बाळ बढ़ावे ढोंगी एक तै एक आड़े

कई पेट घुमावे माळ उड़ावे कई हांडे भूखे पेट आड़े
आपणी गावे ना सुणना चाहवे घणे अप टू डेट आड़े
स्कूल का चाहे मुँह ना देख्या ठा रहे बत्ती स्लेट आड़े
इसे सै धन्ना सेठ आड़े इनने बैंकां की तळी दिखाई रै
सब क्याहें का नाश .....

पढां पढावां अंधकार मिटावां जै इनसे पिंड छुटाणा
माणस माणस में कोई फर्क नही चाहिए प्रेम बढ़ाणा
बंधी बुहारी आच्छी लागय या सबकी समझ बनाणा
भगतसिंह सै पूत खपे जद होया आजादी का आणा
राजकुमार सबनै समझाणा ज्योत सै ज्योत जलाई जै
सब क्याहें का नाश .....

म्हारी तो या जंग सै अब मेहनत की लूट बचाणे की
लुटेरे ना आतंकवादी म्हारी आदत करके खाणे की

देश धर्म की खातिरअपणी जिंदगी भी बलिदान करी
कदे शेर कदे सांप के मुंह में हथेली ऊपर ज्यान धरी
सादा बाणा, करके खाणा, खेत और खलिहाण भरी
जाडा गर्मी कदे नही देखी दिनऔर रात कुर्बान करी
अन्न धन की भंडार भरी ना छोडी कसर कमाणे की
लुटेरे ना .....

बाबू खेत में बेटा फ़ौज में दुश्मन गैल्या जंग लड़ रै
टैंक चलावा जहाज उड़ावां जड़े अड़ावे ओड़े अड़ रै
कमा कमा के झोड़ा हो लिया रोटी के सहंसे पड़ रै
दो दो महीने नहाएं हो ज्यां हम पशुआ तै भुंडे सड़ रै

लुटेरे पाछे पड़ रै हमने जगह नही जान छुपाणे की
लुटेरे ना .....

मेहनत म्हारी चौधर थारी कद लग सहन करी जागी
खाद बीज भी घर ते लागय क्यूकर खेती करी जागी
ब्याज के ऊपर ब्याज लगै या धरती रहन धरी जागी
कदे सूखे में कदे बाढ़ में कद लग फसल हरी जागी
कद लग डंड भरी जागी कोर्ट,पुलिस और थाणे की
लुटेरे ना .....

बोई सै तो काट भी जाणा हमने किसे का डर नही
हम भी सुख तै रहना चाहवे क्यू थारे जैसे घर नही
म्हारी खावे हमने गुर्रावे तन्ने कति लागता डर नही
घणा आसमान में उड़ता जावे के तेरे कटणे पर नही
राजकुमार नै डर नही कदे करी ना बात उल्हाणे की
लुटेरे ना .....

लोक-विनोद

मेज तलै है जी

एक बै एक स्कूल में डी.ओ. चली गई। उस स्कूल को दसमी कलास में छोरे पढ़ाई में रद्दी थे अर उनके नाम थे-होशियार सिंह और कशमीर सिंह। उननै जब बेरा पाट्या अक् डी.ओ. चैकिंग करैगी तो कश्मीर मेज तलै जा लुहक्या। डी.ओ. नै क्लास में आणा ए था। आकै ने भारत का नक्शा बोर्ड पै बणाकै अर् न्यूं बोल्ली-होशियार सिंह लड़का बताओ-कश्मीर कहां है? होशियार सिंह फट उठ्या अर् न्यूं बोल्या-मेज तलै है जी।

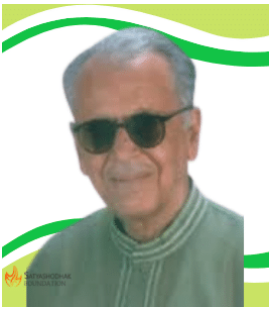

माटी के दर्द को वाणी देती पानीदार ग़ज़लें

□ भागीनाथ यादवराव वाकळे

पेट की भूख से आग ऐसी लगी
जल के आदर्श सब रोटियाँ हो गए।

माँ, माटी और बाटी जीवन का यथार्थ है। इसमें कोरे आदर्श को कोई जगह नहीं क्योंकि यथार्थ से जुड़ाव वर्तमान है और आदर्श से जुड़ाव भविष्य। भविष्य से वर्तमान कई दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण है, क्योंकि वर्तमान पर ही भविष्य का अस्तित्व टिका हुआ है। इसलिए माँ, माटी और बाटी का केवल ऋण ही स्मरणीय है, उस ऋण से उऋण होना लगभग असंभव है। इनके प्रति का दायित्व बोध मनुष्य को कर्मरत, कर्मयोगी बनाता है। जो कर्मयोगी माँ, माटी का मूल्य जानता है; वही उसकी अपेक्षा , यातना, पीड़ा समझता है। ऐसे ही कर्मयोगी है इस माटी के सपूत उदयभानु हंस, जिन्होंने अपनी कलम से माटी के मूक व्यथा को मुखरता प्रदान की है।

उदयभानु हंस एक ऐसा नक्षत्र है जो साहित्यकाश में उदित होकर माँ, माटी व बाटी की कथा व्यथा को प्रकाशित करते रहें। रुबाई के प्रवर्तक, रुबाई सम्राट, ख्यातिलब्ध कविवर हरियाणा के राज्य कवि उदयभानु हंस, केवल हरियाणा ,पंजाब, हिमाचल प्रदेश में ही नहीं इससे इतर समूचे हिंदी जगत में ससम्मान पढ़े जाते हैं।

हिंदी साहित्य साधकों में अपने अमूल्य योगदान के लिए उदयभानु हंस का नाम आदर के साथ लिया जाता है। हिंदी ग़ज़ल को विकसित करने वाले चंद गजलकारों में एक साहित्य के प्रमुख स्तंभ लब्ध प्रतिष्ठित साहित्यकार एवं अनेकायामी व्यक्तित्व तथा प्रतिभा के धनी उदयभानु हंस ने जहाँ ग़ज़ल के क्षेत्र में उसकी गुणात्मकता से नए कीर्तिमान स्थापित किए । वहीं साहित्य सर्जन की विविध विधाओं में अपनी असाधारण प्रतिभा का परिचय दिया। बहुआयामी प्रतिभा के धनी साहित्यकार उदयभानु हंस जी ने गीत, दोहे,कविता,ग़ज़ल आदि में समान अधिकार के साथ उच्चस्तरीय साहित्य की रचना की है।

किसी व्यक्ति के व्यक्तित्व को स्मरणीय बनाने में उनके द्वारा स्थापित समाज सापेक्ष मानव मूल्यों से परिपूर्ण उदात्त कृतित्व का महत्वपूर्ण स्थान रहता है । यह वैशिष्ट्य ही इसे अमरत्व प्रदान करता है। इस दृष्टि से उदयभानु हंस का कृतित्व निःसंदेह सराहनीय है। उन्होंने हिंदी जगत की सराहनीय सेवा की है । उन्होंने व्यापक और अनेकायामी जीवन के जिन पहलुओं को जिया,देखा,परखा है तथा भोगा है। उनको अपनी कविता,गीत, दोहों तथा ग़ज़लों के माध्यम से अभिव्यक्त किया है। उनके शब्दों में-

मैंने अनुभवों का रस जो लिया है जीवन से
कुछ भरा है गीतों में कुछ ग़ज़ल में डाला है।

हिंदी जगत में अलग प्रतिमान स्थापित करने वाले कविवर उदयभानु हंस समकालीन काव्य सर्जना की शक्तिमत्ता के ज्योतिश्मन्त प्रमाण-पत्र ही कह सकते हैं। वे हिंदी की रचनाधर्मिता के प्रभावंत स्वर ही नहीं, उसमें समाहित बौद्धिकता और भाव तरलता के संगम स्थल भी है और ऐसा संगम स्थल, जहाँ घाव , भाव व विचार गीत ग़ज़ल के रूप में ढल कर आए हैं –

वक्त ने हंस को घाव जितने दिए
वह ग़ज़ल-गीत की पंक्तियाँ हो गए।

या हंस जी की ही कलम है, जो घाव को भी भाव के रूप में प्रवाहित करते हुए,गीत ग़ज़ल के पैकर में ढालती है। यह वही कलम है जो माटी के दर्द को वाणी देती है –

कौन अब सुनाएगा दर्द हमको माटी का
'प्रेमचंद' गूंगा है लापता 'निराला' है ।

यह दो पंक्तियाँ एक ऐसे व्यक्तित्व का आत्मकथ्य है, जो इस विडंबना को अपने आसपास देख रहा है । आम आदमी तथा किसान की पीड़ा को वाणी देने वाले प्रेमचंद आज 'गूँगा' हैं और क्रांति का मसीहा जीर्ण बाहु है शीर्ण शरीर /उसे बुलाता कृषक अधीर/ ए विप्लव के वीर /

बादल राग के माध्यम से क्रांति का आह्वान करने वाले क्रांतिचेता निराला अब 'लापता' है। यही चिंता का विषय है -'अब कौन सुनाएगा दर्द हमको माटी का' ग़ज़लकार अब उसकी अगुवाई करना चाहता है-

हमने अपने हाथों में जब धनुष सँभाला
बाँध कर के सागर को रास्ता निकाला।

ज्ञान प्रकाश विवेक कहते हैं – " अक्सर ऐसा देखा गया है , ग़ज़ल में जिसने नई डगर पर चलने का जोखिम उठाया है ,वही ग़ज़लें ज्यादा मकबूल हुई है ।" इस दृष्टि से उदयभानु हंस एक मिसाल है ,जिन्होंने प्रेमचंद, निराला का अनुगमन करते हुए धनुष संभाला है।

झोपड़ी की आहों से महल भस्म हो जाते
निर्धनों के आँसू में जल नहीं है ज्वाला है।

मेहनतकश लोगों के आँसू को आँसू जल नहीं बल्कि ज्वाला- कण कहते हुए संकेत करते हैं कि-

मजदूर के माथे का कहता है पसीना भी
महलों में प्रलय होगी ,कुटिया में जशन होगा।

मानो जैसे अवाम की भावनाओं को शब्द दिए हो। क्योंकि अवाम में जो स्वप्न देखे थे, वे भरभरा कर टूटे थे। उन्हीं के शब्दों में -

स्वप्न सब राख की ढेरियाँ हो गए

कुछ जले, कुछ बुझे ,फिर धुआँ हो गए।

उदयभानु हंस ने मिथकीय पात्रों को मौजूदा समय की विसंगतियों और नैतिक पतन से जोड़कर यथार्थ रचना की है। डॉ रामजी तिवारी मिथकों के विषय में कहते हैं कि मिथक जनमानस में पहले से बैठे रहते हैं ।उनका आधार लेने से रचना की संप्रेषणीयता ज्यादा हो जाती है।इस हेतु ग़ज़लकार ने मिथकों का प्रयोग अपनी रचनाओं में किया है। मिथकीय संस्पर्श वाले अशआर ज्यादा।

जिस सीता की रक्षा का दायित्व लक्ष्मण पर था , आज सीता हरण में लक्ष्मणों का हाथ है। यह कैसी विडंबना है आज राम रावण में साँठ-गाँठ हो गई। दुर्गुणों का संक्रमण हो गया है। राम,लक्ष्मण और सीता जो आदर्श रिश्तो के लिए जाने जाते थे।आज उन संबंधों में बिखराव आया है। संबंधों का विखंडन कलियुग की देन है । एक अन्य मिथकीय संदर्भ वाला शेर-

इस देश की लक्ष्मी को लूटेगा कोई कैसे ?

जब शत्रु की छाती पर अंगद का चरण होगा।

रामायण में रावण ने धृष्टता कर सीता का हरण किया था। तब अंगद ने प्राण विद्या के बल पर अपना शरीर बलिष्ठ और पैरों को दृढ़ कर लिया; जिसे हिलाना किसी के भी बस की बात नहीं थी। उक्त शेर में ग़ज़लकार की प्राश्निक मुद्रा संकेत करती है, सूचित करती है , सजग और सतर्क करती है कि 'शत्रु की छाती पर' 'अंगद का चरण' रहे तो 'देश की लक्ष्मी' को लूटने की, उसकी ओर वक्र दृष्टि से देखने का धारिष्ट कोई नहीं कर पाएगा।

उदयभानु के शेरों में बार-बार प्रश्न दिखाई देते हैं। वे प्रश्न-चिह्न नहीं बल्कि समाज चिंता के चिह्न है। एक उदाहरण –

इंसान की सूरत में जहाँ भेडिये फिरते हैं

फिर हंस कहो कैसे दुनिया में अमन होगा।

दुनिया में अमन शांति के लिए इंसानों की आवश्यकता है। जिनमें इंसानियत की भावना व भाईचारा हो। इंसान के मुखौटों में 'भेड़िये' के चरित्र वाले देश की अमन शांति में बाधक है। ये 'भेड़िये' यत्र-

तत्र सर्वत्र अपनी मौजूदगी रखते हैं, बस दर्शाते नहीं है। उन्हें ढूँढते की आवश्यकता नहीं है। ग़ज़लकार के शब्दों में –

सिर्फ जंगल में ढूंढते क्यों हो ?

भेड़िए अब किधर नहीं होते ।

शायरी का एक मकसद समाज को सही दिशा दिखाना भी होता है। उदयभानु जी ने भी शायर होने का फ़र्ज़ अपने नसीहतों को ग़ज़ल बना कर अदा किया है। उनकी मानीखेज़ शायरी समाज को कई दृष्टि से सचेत करती है-

जीवन के अंधेरे में हिम्मत न कभी हारो
हर रात की मुट्ठी में सूरज का रतन होगा।

मनुष्य निरंतर सीखता रहता है, सीखने की प्रक्रिया में नैरंतर्य हो तो जीवन-गीत मधुर बन जाता है। फिर जीवन-समर में कठिनाइयाँ कितनी भी आए। उदयभानु हंस एक शेर कहते हैं –

जीने की कला हमने सीखी है शहीदों से
होठों पे ग़ज़ल होगी जब सिर पर कफन होगा।

हमारे जाँबाज़ सिपाही 'सिर पे कफ़न' बाँधकर भी 'होठों पर ग़ज़ल' लेकर चलते हैं। दो मिसरे जीवन का 'फाइन' 'आर्ट' ही तो है । जो शहीदों से जीवन जीने की कला व ऊर्जा ग्रहण करने का आग्रह करते है। वास्तविक जिंदगी के व्याकरण को ग़ज़लकार भाषा के व्याकरण से अधिक पेचीदा मानता है। किसी भी भाषा के अंग प्रत्यंग का विश्लेषण, संश्लेषण व विवेचन व्याकरण कहलाता है । व्याकरण किसी भाषा को

अपने आदेश से नहीं चलाता, घुमाता ; प्रत्युत भाषा की स्थिति, प्रवृत्ति प्रकट करता है। उसी प्रकार जिंदगी का व्याकरण जिंदगी की स्थिति प्रवृत्ति को प्रकट करता है।

शब्द नारे बन चुके हैं,अर्थ घोर अनर्थ करते
संधि कम विग्रह अधिक ,जिंदगी के व्याकरण में ।

जिंदगी के व्याकरण में 'संधि कम' 'विग्रह अधिक' हो तो दूरियाँ निर्माण होती है।जिंदगी का स्वरूप बदल जाता है। यह दूरियाँ अलगाव, घुटन,संत्रास, पीड़ा, कुंठा को जन्म देती है ।विद्वेष की जड़े गहरी होती है। प्रेम भाव दुर्लभ हो जाता है। जिंदगी के व्याकरण का एक महत्वपूर्ण अंग या तत्व है- प्यार का व्याकरण। ग़ज़लकार के समक्ष प्रश्न है कि –

प्यार का व्याकरण लिखे कैसे
भाव होते हैं स्वर नहीं होते ।

स्वर दो प्रकार के हैं – व्याकरण के स्वर(vovels) तथा संगीत के स्वर। व्याकरण के स्वर भाषिक सौंदर्य वृद्धि में सहायक है; तो संगीत के स्वर गीत व भाव की प्रभावोत्पकता बढ़ाते हैं।भावों को स्वरों का जोड़ मिले तो वे बेजोड़ बन जाते हैं। परंतु वर्तमान में प्यार में भाव तो दिखते हैं लेकिन स्वर नदारद है । इसलिए ग़ज़लकार के समक्ष प्यार का व्याकरण कैसे लिखे यह प्रश्न है । व्याकरण छोड़के भाव को समझे तो ग़ज़लकार को उसमें निरालापन दिखाई देता है। जैसे –

दीप या पतंगे हो, दोनों साथ जलते हैं
प्यार करने वालों का ढंग ही निराला है ।

'दीपक' और 'पतंगा' यह पुराने प्रतीक है। लेकिन कई बार पुराने प्रतीक भी नएपन का अहसास कराते हैं ; तो वहाँ अंदाजे-बयाँ का सौंदर्य होता है। ग़ज़लकार के अंदाज़े-बयाँ की एक बानगी गौरतलब है –

पूछते हो पता ठिकाना क्या
हम फकीरों के घर नहीं होते।

कब की दुनिया मसान बन जाती
उसमें शायर अगर नहीं होते।

उपर्युक्त दो मिसरे दुनिया में शायरों की अहमियत को उद्घाटित करते हैं। शायर ध्वजवाहक है ।शायर प्रवर्तक है ।शायर किंग मेकर है । या कहें समाज निर्माता है । शायरों ने समाज में जान और साहित्य में प्राण फूँकने का काम किया है। यह मूल्यवान बात उदयभानु हंस जानते हैं इसीलिए तो कहते हैं। 'दुनिया शमशान बन जाती यदि शायर नहीं होते' बेशक उदयभानु हंस उच्च पद के और आला कद के ग़ज़लकार है। ग़ज़लों में अनुशासन और अनुभव में परिपक्वता उनकी ग़ज़लों को विशेष 'हाइट' प्रदान करती है ।ग़ज़लकार का संवेदनशील मन जब ग़ज़ल में संवेदना भर देता है ; तो ग़ज़ल की संवेदयता दुनिया को स्वर्गसम बना देती है । तब जाकर ही साहित्यकार 'सम्राट' कहलाता है।

भागीनाथ यादवराव वाकळे, कवि और आलोचक, सम्प्रति – हिंदी अध्यापक, रिवर डेल हाई स्कूल औरंगाबाद, महाराष्ट्र मो. – 9404988813

लोक-विनोद

ऊकडूं बैठणा अर फूंक मारणा ए घरेलू सै

एक देहाती शहर के डाक्टर धोरै जाकै बोल्या-डाक्टर साब, मेरै खांसी जुकाम होर्या सै कोए देशी घरेलू सा नुक्सा बताओ नै। डाक्टर बोल्या-1 किलो चीनी, 50 ग्राम छुहारे, 10 ग्राम सौंठ, 10 ग्राम अदरक, 10 ग्राम मुलैह्ठी, 10 ग्राम ईलायची, पाणी में उबाल कै अर ऊकडूं बैठ कै-फूंक मार-मार कै पी लिए। देहाती न्यूं बोल्या-डाक्टर साब-'म्हारै तो इनमें तै ऊकडूं बैठणा अर फूंक मारणा ए घरेलू सै'।

ओमप्रकाश वाल्मीकि जी के महापरिनिर्वाण दिवस पर

□ पूनम तुषामड़

17 नवंबर 2020 को साहित्यकार ओमप्रकाश वाल्मीकि जी के महापरिनिर्वाण दिवस के मौके पर उत्तर प्रदेश के सहारनपुर की संस्था साहित्य चेतना मंच के तत्वावधान में एक वेबिनार का आयोजन किया गया। जिसमे ओमप्रकाश वाल्मीकि की स्मृति में प्रथम ओमप्रकाश वाल्मीकि स्मृति साहित्य सम्मान की शुरुआत साहित्य चेतना मंच के द्वारा की गई। ओमप्रकाश वाल्मीकि जी ने अपने समय में हिंदी साहित्य की एक ऐसी गैर-उर्वर भूमि को जोतकर उपजाऊ भूमि के रूप में तब्दील किया जो सदियों से उपेक्षित पड़ी थी। उन्होंने इस बंजर भूमि को जोत-बो कर इस पर दलित साहित्य की फसल उगाई। यह कार्य उस दौर में बहुत कठिन था। मगर ओमप्रकाश वाल्मीकि ने यह कर दिखाया। इसके साथ ही उन्होंने दलित साहित्यकारों को यह सन्देश दिया कि हमें क्या लिखना चाहिए और क्यों लिखना चाहिए। उन्होंने साहित्य को मनोरंजन के लिए नहीं बल्कि एक खास मकसद के लिए लिखने की बात कही। उन्होंने "जूठन" जैसी आत्मकथा लिखी और सफाई समुदाय की ऐसी पीड़ा को साहित्य जगत के सामने रखा जिस पर अब तक कोई ध्यान नहीं दे रहा था। एक अछूते क्षेत्र से साहित्य का परिचय कराया। ये बातें बीते 17 नवंबर, 2020 को दलित लेखक व विचारक ओमप्रकाश वाल्मीकि के महापरिनिर्वाण दिवस के मौके पर डॉ. जयप्रकाश कर्दम ने वेबिनार को संबोधित करते हुए कही। इस मौके पर वेबिनार के दौरान दस दलित

साहित्यकारों को ओमप्रकाश वाल्मीकि स्मृति साहित्य सम्मान से सम्मानित किया गया। सम्मान की घोषणा साहित्य चेतना मंच के अध्यक्ष नरेन्द्र वाल्मीकि ने की।

इस समारोह में उन 10 बुद्धिजीवियों को सम्मानित किया गया है, जो ओमप्रकाश वाल्मीकि जी के साहित्य एवं दलित साहित्य की जानकारी रखते हैं और उस जानकारी को अपनी रचनाओं द्वारा समाज के समक्ष प्रस्तुत करते हैं। यह कहना अतिशयोक्ति ना होगा कि ऐसे रचनाकारों के हाथों में कलम एक जलती हुई मशाल के रूप में दिखाई देती हैं। जो समाज को एक नई दशा व दिशा प्रदान करने के साथ वैचारिक समझ-बूझ स्थापित करती है। इस वर्ष साचेम द्वारा ऐसे ही इन 10 रचनाकारों के कार्यों को सलाम करते हुए सम्मानित किया। सम्मानित होने वाले साहित्यकारों में मथुरा के सज्जन क्रांति, कानपुर के देव कबीर, फैजाबाद के आर. डी. आनंद, दिल्ली की साहित्यकार डॉ. पूनम तुषामड़, डॉ. राजकुमारी, राज वाल्मीकि, दक्षिण बिहार केंद्रीय विश्वविद्यालय के प्रोफेसर डॉ. कर्मानंद आर्य, सहारनपुर के डॉ. प्रवीन कुमार, आगरा के अरविंद भारती व नूंह (हरियाणा) के दीपक मेवाती शामिल रहे। सभी सम्मानित साहित्यकारों को ईमेल के जरिए सम्मान पत्र भेजा गया।

इससे पहले अपने संबोधन डॉ. जयप्रकाश कर्दम ने ओमप्रकाश वाल्मीकि के साहित्य पर विस्तार से चर्चा करते हुए कहा कि सामाजिक विषमता और भेदभाव को उजागर करने वाली रचनाओं को रच ओमप्रकाश वाल्मीकि ने हिन्दी साहित्य में समाज के सबसे वंचित तबके को स्थापित किया। उन्होंने 'अम्मा' जैसी कहानी लिखी जो मैला ढोने वाली महिलाओं का प्रतिनिधित्व करती है। उन्होंने दलित वर्ग के आपसी मतभेदों को भी सामने रखने के लिए 'शवयात्रा' जैसी कहानी भी लिखी जो उस समय बहुत चर्चित रही। हालांकि उसकी आलोचना भी बहुत हुई। डॉ. कर्दम ने आगे कहा कि ओमप्रकाश वाल्मीकि जी का रचना

संसार उनका साहित्य नई पीढ़ी का उसी तरह मार्ग दर्शन करता है जिस प्रकार अंधेरे में सागर के यात्रियों को लाइट हाउस या प्रकाशस्तंभ।

विशिष्ट वक्ता के रूप में बोलते हुए प्रसिद्ध साहित्यकार सुशीला टाकभौरे ने ओमप्रकाश वाल्मीकि के संस्मरण साझा किए। उन्होंने बताया कि जब उन्होंने ओमप्रकाश वाल्मीकि से पूछा कि वे वाल्मीकि टाइटल क्यों लगाते हैं, वह तो ब्राह्मण थे। इस पर ओमप्रकाश वाल्मीकि ने कहा था कि आजकल सब जानते हैं कि वाल्मीकि कौन होते हैं। वाल्मीकि एक जाति की पहचान हो गया है और पूरे देश में वाल्मीकि जाति को लोग जानते हैं। मुझसे कोई मेरी जाति न पूछे इसलिए मैंने अपने नाम के साथ ही अपनी जाति लगा ली है। सुशीला जी ने बताया कि उन दिनों आज की तरह मोबाइल की सुविधा नहीं थी इसलिए पत्र व्यवहार होता था। उनके बहुत सारे पत्र मेरे पास हैं। उन्होंने बताया कि आज ओमप्रकाश वाल्मीकि के साहित्य को विभिन्न विद्यालयों और विश्वविद्यालयों में पढ़ाया जाता है। उन्होंने आयोजकों से कहा कि वे ओमप्रकाश वाल्मीकि के समग्र साहित्य को एक जगह ग्रंथावली के रूप में संग्रहित करें।

इस अवसर पर सम्मानित साहित्यकारों में देव कबीर, आर.डी. आनंद, सज्जन क्रान्ति, डॉ. पूनम तुषामड़ और डॉ. राजकुमारी ने अपनी बात संक्षेप में रखी। कार्यक्रम की अध्यक्षता साहित्य चेतना मंच के संस्थापक धर्मपाल सिंह चंचल ने की। जे..एम. सहदेव ने इस कार्यक्रम में शामिल हुए सभी व्यक्तियों का हृदयातल की गहराइयों से धन्यवाद किया और श्याम निर्मोही ने कुशलतापूर्वक मंच का संचालन किया।

निजाम को आईना दिखाते चले गये राहत इंदौरी

□ गुरबख्श सिंह मोंगा

अविचल आभामंडल के धनी एवं प्रख्यात उर्दू कवि राहत इंदौरी 11 अगस्त को हमें अलविदा कह गये। अपने तीक्षण बिंब चित्रण के लिये जाने वाले राहत ने देवी अहिल्या बाई युनिवर्सिटी में भी उर्दू प्रोफेसर के नाते पूरी धाक जमाई। समाज के अंतिम जन तक पंहुचने की कला में माहिर उनकी नाचती आंखे, मचलते हाथ और माईक पकड़ने का अपना अलग अंदाज, राहत साहब की शायरी की असली थाती थी। जिस भी शहर मे गये, वहां अपने अदांज-ए-बयां और जिदांदिली से उन्होने हर उम्र के श्रोताओं को अपना मुरीद बना लिया। इतनी मकबूलियत हासिल कर पाना किसी और के बस की बात नहीं।

1 जनवरी 1950 को पिता रफतुला कुरैशी, माता निशा बेगम के घर राहत इंदौरी का जन्म हुआ। उनकी दो बहनें तहजीब व तकरीब, बडा भाई अकील व छोटे भाई आदिल रहे। पिता एक कपडा मिल में कर्मचारी थे और परिवार आर्थिक पक्ष से कमजोर था। 10 वर्ष की उम्र में इंदोर शहर में चित्रकारी का कार्य शुरू किया जिसमें जल्द ही उनकी पहचान बन गई। 19 वर्ष की उम्र में कालेज की पढ़ाई के दौरान शायरी की शुरूआत की जो मरते दम तक जारी रही। 1978 में बरतुला विश्वविद्यालय भोपाल से एम0एम0 उर्दू साहित्य करने के पश्चात 1985 में उन्होनें

भोजमुक्त विश्वविद्यालय से पीएच.डी. करने के बाद इंदर कुमार कालेज, इंदोर में बच्चो को पढ़ाना शुरू किया।

डा0 इंदौरी ने अपने जीवन काल में कई काव्य संग्रह लिखे जिसमें "दो कदम और सही" "नाराज", "धूप बहुत है", "चांद पागल है", काफी चर्चित हुए। बालीवुड की दो दर्जन फिल्मों के लिए भी राहत साहब ने गाने लिखे जैसे "मुन्ना भाई एम.बी.बी.एस.", "मिशन कश्मीर" आदि जिसे दर्शकों ने काफी सराहा।

उनके एक शेर की बानगी देखिए.....

मुझे खबर नहीं मंदिर जले हैं या मस्जिद
मेरी निगाह के आगे तो बस धुआं ही धुआं है मिंया।

उपरोक्त लाईनों के माध्यम से कवि किसी एक का पक्ष न लेते हए साम्प्रदायिकता की आग द्वारा समाज को हो रहे नुकसान के प्रति सचेत करता नजर आता है।

पूरी दुनिया में अपने अल्हदा अदांज से शायरी कह कर मुशायरा लूट लेने वाले राहत इंदौरी की रचनाशीलता में सिफ मोहब्बत नहीं, चुनौती भी थी। खुद चुनौती बनकर दुनिया से लोहा लेने का माद्दा भी था। तभी तो उनका यह शेर बार बार फरमाईश करके सुना गयाः-

वो चाहता था कि कासा खरीद ले मेरा
मैं उसके ताज की कीमत लगा कर लौट आया

डॉक्टर राहत इंदौरी एक ऐसे अजीम शायर थे जो आसमान को जमीन पर लाने की कोशिश करते थे, जो गरीबों को जबान देते थे, जो प्रतिगामी प्रवृत्तियों और कट्टरता के खिलाफ लिखते, पढ़ते, कहते, रहते थे और जो मुशायरों के लुटेरे थे। वह सत्ता की आंख में आंख डालकर शायरी करते थे, वह शब्दों को गोल-मोल नहीं घुमा कर बल्कि सीधे-सीधे सत्ता पर, जनविरोधी सत्ता पर, किसान मजदूर विरोधी सत्ता पर, सीधा हमला करते थे और एक तरह से सत्ता उनको ना पसंद करती थी।

उनकी शायरी हौसलों की बात करती है, हिम्मत बढ़ाती है, जनता का मनोबल उठाती है, उसको रास्ता दिखाती है।

उन्होंने 1986 में कराची में एक शेर पढ़ा और पाकिस्तान के नेशनल स्टेडियम में हजारों लोग खड़े होकर पांच मिनट तक ताली बजाते रहे। उसी शेर को कुछ अर्से बाद दिल्ली के लाल किले के मुशायरे में पढ़ा, तब भी उसी तरह की शोरअंगेजी हुई। शेर थाः-

अब के जो फैसला होगा वो यहीं पे होगा,
हमसे अब दूसरी हिजरत नहीं होने वाली....।

यह शेर पाकिस्तान और हिंदुस्तान के अवाम के मुश्तरका गम को बखूबी ब्यान करता है। उनका एक और शेर हैः-

मेरी ख्वाहिश है कि आंगन में न दीवार उठे,
मेरे भाई मेरे हिस्से की ज़र्मी तू रख ले...।
यह शेर भी गौरतलब हैः-
ऐसे फूल कहां रोज़-रोज़ खिलते हैं,
सियाह गुलाब बड़ी मुश्किलों से मिलते है.....।

राहत साहब ने समकालिक विषयों जैसे वैश्वीकरण, समाज में महिलाओं की स्थिति और फिरकापरस्ती के बारे में आला दर्जे का कलाम रचा, जिसने हर तरह की कटटरता ओर संकीर्णता, जहालत और कूपमण्डूकता को अपनी झाड़ू से बुहार कर अलग किया है।

जो कहा, उसे कहने के, प्रस्तुति के बेजोड़ और बेलौस अंदाज में कहा। वे आज हमारे बीच में नहीं हैं लेकिन उनकी शायरी जनता, किसानों, मजदूरों के बीच में जिंदा रहेगी। उनके कमाल के शेर देखिए.....

दो गज सही यह मेरी मिलिकयत तो हैं,
ऐ मौत तूने मुझे जमींदार बना दिया।
आंख मे पानी रखो होठों पर चिगांरी रखो,

जिंदा रहना है तो तरकीबें बहुत सारी रखो।
मैं न जुगनू हूं, दिया हूं, ना कोई तारा हूं,
रोशनी वाले मेरे नाम से डरते क्यूं हैं?

विपरीत हवा पर लिखा उनका शेर
जिन चराग़ो से तअस्सुब का द्युआं उठता है,
उन चरागों को बुझा दो तो उजाले होंगें।

पिछले दिनो केन्द्र सरकार द्वारा कौमी नागरिकता बिल लागू करने के उपरांत जो विरोध प्रर्दशन हुए उसमें शामिल नागरिकों की जुबान पर राहत साहब की निम्न पक्तियां रहीः-

अगर खिलाफ है, होने दो, जान थोड़ी है,
ये सब धुआं है, कोई आसमान थोड़ी है।

लगेगी आग तो आयेंगे घर कई जद में,
यहाँ पे सिर्फ हमारा मकान थोड़ी है।
मैं जानता हूं कि दुश्मन भी कम नही लेकिन,
हमारी तरह हथेली पे जान थोड़ी है।

हमारे मुंह से जो निकले वही सदाकत है,
हमारे मुंह मे तुम्हारी जुबान थोड़ी है।

जो आज साहिब-ए-मसनद हैं कल नहीं होंगे,
किरायेदार हैं जाती मकान थोड़ी है।

सभी का खून है शामिल यहाँ की मिट्टी में,

किसी के बाप का हिन्दोस्तान थोड़ी है।
वबा(महामारी) फैली हुई है हर तरफ,
अभी माहौल मर जाने का नईं.....

कहने वाले राहत इंदौरी दुनिया छोड़ गये, लेकिन उनकी दो सुन्दर लाईनें हमारा हौंसला बडाने के लिए काफी हैः-

राह के पत्थर से बढ़ कर कुछ नही है मंजिले
रास्ते आवाज़ देते हैं सफर जारी रखो।

गुरबख्श सिंह मोंगा, सिरसा,
मोः- 93542-21054

लोक-विनोद

बख्त की इसी-तिसी होयीं सै

एक बै की बात सै एक ताऊ रेल में सफर करै था। छोरा तो उसके था नहीं, वो खुदे बेटी के पीलिया जावै था अर एक गठड़ी तीलां की लेर्या था। इतनै में एक टी.टी आग्या। टी.टी. नै उस ताऊ का रंग ढंग देख कै उसका मजाक करण की सोच्ची। बोल्या अक् ल्या ताऊ टिकट दिखया-ताऊ नै टिकट दिखादी। टी.टी. बोल्या-ताऊ तूं तो मर्द माणस अर या टिकट तो जिनानी सै। 'इब के करूं भाई' ताऊ दुखी सा हो कै बोल्या। टी.टी. बोल्या-देख ईब तो बड़ा आदमी करकै छोडूं सूं पर आपणा आग्गै का प्रबंध करले। या कह्कै टी.टी. तो चल्या गया। उसके जांदे ताऊ नै तो घर खोली गठड़ी अर जनाने कपड़े पहर कै घूंघट करकै बैठग्या। थोड़ी देर पाच्छै ओ.ए.टी.टी. फेर आग्या। देख्या ताऊ तो ताई बण्या बैठ्या। फेर टिकट मांग ली। देखकै टिकट न्यूं बोल्या-ताई तूं जनानी सै पर तेरी टिकट तो मर्दानी सै। या सुणकै ताऊ पै रह्या नहीं गया-चूंदड़ी माटी फेंक कै अर दे मुच्छां पै तो न्यूं बोल्या-रै थे तो हाम भी मर्दे पर या बख्त की इसी-तिसी होयीं सै।

देस हरियाणा प्राप्त करने के लिए संपर्क करें		
कुरुक्षेत्र	विकास साल्याण	9991878352
	योगेश शर्मा	9896957994
यमुनानगर	बी मदन मोहन	9416226930
अंबाला शहर	जयपाल	9466610508
करनाल	अरुण कैहरबा	9466220145
इंद्री	दयालचंद जास्ट	9466220146
घरौंडा	राधेश्याम भारतीय	9315382236
	नरेश सैनी	9896207547
जीन्द	मंगतराम शास्त्री	
टोहाना	बलवान सिंह	9466480812
नरवाना	सुरेश कुमार	9416232339
सोनीपत	विरेंद्र वीरू	9467668743
पानीपत	दीपचंद निर्मोही	9813632105
पंचकुला	सुरेंद्र पाल सिंह	9872890401
	जगदीश चन्द्र	9316120057
रोहतक	अविनाश सैनी	9416233992
भिवानी	का. ओमप्रकाश	9992702563
दादरी	नवरत्न पांडेय	9896224471

देस हरियाणा प्राप्त करने के लिए संपर्क करें		
सिरसा	परमानंद शास्त्री	9416921622
हिसार	राजकुमार जांगड़ा	9416509374
महेन्द्रगढ़	अमित मनोज	9416907290
मेवात	नफीस अहमद	7082290222
शिमला	एस आर हरनोट	1772625092
राजस्थान (परलीका)	विनोद स्वामी	8949012494
चंडीगढ़	ब्रजपाल	9996460447
	पंजाब बुक सेंटर, सैक्टर 22	
दिल्ली	संजना तिवारी , नजदीक श्रीराम सेंटर,	
	आर.के. मैगजीन , मौरिस नगर, थाने के सामने	
	एनएसडी बुक शॉप	
ई-प्राप्ति	www.notnullcom/desharyana	